

यह नई कड़ी

बाल-उपन्यासों में यह उपन्यास एक नवीनतम कड़ी है। बाल-उपन्यासों से यह आशा की जाती है कि बच्चे उन्हें पढ़ेंगे। आम तौर से इसका एक सस्ता-सा नुस्खा अपना लिया जाता है। पंचतंत्र, हितोपदेश, ईसप की कहानियों आदि की कुछ ईंटें लीं—जादू की छड़ी या ऐसी ही कोई चीज ली—बच्चों को एक ऐसी दुनिया में पहुँचाने का इंतजाम कर दिया, जो कहीं नहीं होती, कभी नहीं थी, कभी नहीं होगी। उनकी आकांक्षाओं और कल्पनाओं के साथ खूब खेला गया और उन्हें इतना ऊँचे चढ़ा दिया गया कि नीचे गिरते ही वे चकनाचूर हो जाएँ। इन कल्पनाओं को, स्वप्नों को सदा एक जीती-जागती दुनिया में आना ही पड़ता है—जब वे बड़े होते हैं, तब हम उनके लिए इस कठोर संसार की यातनाओं को लिए तैयार बैठे रहते हैं। मैं कभी नहीं समझ सका कि जादू-टोने की इन कहानियों के जो रूपान्तर हिन्दी में प्रवेश करते जा रहे हैं और बड़े परिमाण में कर भी चुके हैं, उनसे बच्चों के भविष्य का क्या भला होता है !

इसीलिए इस उपन्यास को एक नवीनतम बाल-उपन्यास के रूप में मैंने देखा है। यह उस जादू-टोने के वातावरण से भिन्न है, असंभावनाओं से परे है, इसी दुनिया की वस्तुओं को चित्रित करता है। इस उपन्यास में बड़ों की उन नैतिक धारणाओं को बच्चों के दिमागों में ठूसने की कोशिश नहीं है, जिनका दिवाला स्वयं बड़ों के यहाँ निकल चुका है ! इसमें बच्चों की अपनी समस्याएँ हैं, अपनी भावनाएँ हैं, अपने कार्य-कलाप हैं। पाँच छोटे-छोटे बच्चे बँतू मास्टर से घबरा

कर अपनी एक बाल-मुलभ योजना बनाते हैं और चुपके से घर से निकल पड़ते हैं—एक नई दुनिया बसाने के लिए, जहाँ बेत नहीं है। उनमें साहस है, शौर्य है, भोलापन है, प्रेम है और वे लाखों नन्हे-मुन्नों का प्रतिनिधित्व करते हैं। भूतों को वे अपना दोस्त बनाना चाहते हैं क्योंकि इस दुनिया के 'बड़े' उन्हें भूतों से भी ज्यादा खतरनाक लगते हैं !

हिन्दी के बाल-लेखकों का कोई बहुत सुन्दर मौलिक उपन्यास मेरी नजर ने नहीं गुजरा था। विदेशी उपन्यासों के भारतीय रूपान्तर मैंने बहुत देखे हैं। हो सकता है यह मेरे ही अध्ययन की कमी हो। मेरे लिए यह बाल-उपन्यास सर्वथा मौलिक, अपूर्व पृष्ठभूमि का धनी और समर्थ उपन्यास है। इसके लेखक श्री रायप्रकाश अग्रवाल नई पीढ़ी की ज्योति हैं और यह उनका पहला ही उपन्यास है। उनसे हम सबको ही उच्चतर आशाएँ हैं, बल्कि स्वयं उन्हें भी अपने पर काफी भरोसा है। इसलिए हिन्दी के बाल-पाठक को अभी वह बहुत कुछ दे पाएँगे।

प्रस्तुत उपन्यास मैंने 'पराग' में एक वर्ष तक शोक के साथ धारावाही रूप में प्रकाशित किया है और 'पराग' के नन्हे-मुन्ने पाठकों ने इसे बेहद पसन्द किया है। इसके लिए मैं लेखक को बधाई देता हूँ।

सम्पादक 'पराग', बम्बई

—आनन्दप्रकाश जैन



“टन्...टन्...टन्...टन्...” प्राथमरी स्कूल की छुट्टी की घण्टी बज उठी। कक्षा में बैठे बच्चों ने जल्दी से डेस्क में रखी पुस्तकों को समेटकर बस्ते में भरा, तख्ती-बुतका सँभाला और स्कूल के फाटक की ओर भागे।

नन्हे भी एक हाथ से नीचे की सरकता पेटी का निकर और दूसरे हाथ से तख्ती-बुतका सँभाले फाटक पर आ खड़ा हुआ। यहाँ खड़े होकर अभी उसे अपने मोहल्ले के चार साथियों का इन्तजार और करना था। उसकी कक्षा का कमरा स्कूल के फाटक से सबसे अधिक निकट था, इसलिए वह रोज ही फाटक पर पहले पहुँच जाता था और अन्य चारों साथियों के आने तक इन्तजार करता था। यह इन्तजार उसे बहुत बुरा लगता था। पर पाँचों बच्चों के एक ही मोहल्ले में रहने के कारण उनके माता-पिता ने आदेश दे रखा था कि सब साथ-साथ ही स्कूल जायें और साथ-साथ ही स्कूल से लौटकर आएं करें।

नन्हे को फाटक पर खड़े कतिन ई से पाँच मिनट भी न हुए थे कि मुन्नी वीडनी हुई भीड़ में से निकली और नन्हे की बगल में आकर खड़ी हो गई। मुन्नी नन्हे से एक वर्ष बड़ी थी और कक्षा में भी एक

वर्ष आगे थी। मुन्नी के पीछे-पीछे मोहन धीमे-धीमे चलता हुआ आया और उन दोनों को देखकर रोब से उसने पूछा, “बिरजू और आशा अभी नहीं आये?”



मुन्नी ने शिकायत की—“वे दोनों रोज ही देर करते हैं, मोहन दादा!”

“वे दोनों रोज ही देर करते हैं, मोहन दादा!” मुन्नी ने तुरन्त शिकायत के स्वर में उत्तर दिया।

दादा ने आँखें तरेरकर मुन्नी की ओर देखा और फिर अपने आस-पास जाते हुए लड़कों को सदेह से निहारा कि कहीं किसी ने उसके नाम के साथ ‘दादा’ शब्द लगता तो नहीं सुन लिया। स्कूल के फाटक से निकलते बच्चे अपनी धुन में मस्त थे। उनमें से कोई यह नहीं जान सका था कि मोहन अपने मोहल्ले में ‘दादा’ के नाम से प्रसिद्ध है।

नहीं लाता था।

अभी दादा केवल इतना ही सोच पाया था कि वास्तव में बिरजू और आशा के देर से आने का कुछ इलाज होना चाहिए कि आशा दौड़ती हुई आयी और उनके पास खड़ी हो गयी। तेजी से दौड़कर आने के कारण उसकी साँस फूल रही थी और वह जोर-जोर से हाँफ रही थी। मुन्नी उसे हाँफती देखकर बोली, “लो, रानीजी तो आ गयी, पर बस्ते को पढ़ता छोड़ आई हैं।”

मुन्नी की इस बात ने दादा और नन्हे का ध्यान आशा के कन्धे की ओर खींच लिया। उसके कन्धे पर बस्ता नहीं लटका हुआ था।

“बस्ता कहाँ गया, आशा?” दादा ने आश्चर्य से आशा की ओर देखकर पूछा। टोली का दादा होने के कारण इस तरह की खोज-खबर रखना वह अपना कर्तव्य समझता था।

अब तक आशा का हाँफना रुक गया था। वह बोली, “मेरा बस्ता तो कहीं नहीं भागा जा रहा। बिरजू की चिन्ता करो। वह घर चलने को मना कर रहा है।”

अब की बार तीनों के चौकने की बारी थी।

“बिरजू घर चलने को मना कर रहा है!” दादा ने आशा के मुँह की ओर देखा।

मुन्नी ने तुरन्त बड़ी-बूढ़ी की तरह हाथ मटकाकर कहा, “मैं तो पहले ही सोच रही थी कि आज जो इतनी देर लग रही है, इसमें जरूर कुछ दाल में काला है।”

मुन्नी के इस सवा सोलह आने भूठ का उत्तर किसी ने नहीं दिया। नन्हे दूसरी कक्षा में पढ़ता था और पाँच वर्ष का था। इस प्रकार वह टोली में सबसे छोटी कक्षा में पढ़ता था और उम्र में भी सबसे छोटा था। इसलिए उसने इस कठिन समस्या को सुलझाने में अपने को

अब तक मुन्नी अपनी गलती समझ चुकी थी। मोहन अपने मोहल्ले की टोली में तो दादा था, किन्तु स्कूल में केवल मोहन ही था। मोहल्ले की टोली के पाँचों सदस्यों में सबसे बड़ा होने के कारण और अपने स्कूल की सबसे बड़ी कक्षा में पढ़ने के कारण टोली के चारों सदस्य उसे मोहन न कहकर ‘मोहन दादा’ कहते थे। मोहन को अपने नाम के साथ ‘दादा’ शब्द का लगना बहुत भाता था। इसमें उसे गौरव का अनुभव होता था। लेकिन साथ-ही-साथ वह स्कूल में अपने नाम के साथ दादा कहलवाने से डरता भी था। उसे डर था कि कहीं उसके सहपाठी इसी ‘दादा’ शब्द को लेकर उसका मजाक न उड़ाने लें। आज मुन्नी ने इसी शब्द का प्रयोग स्कूल में करके एक बहुत बड़ा अपराध कर दिया था। परन्तु उसने तुरन्त अपने अपराध की माफी माँग ली, “गलती हो गई, मोहन भैया। अब ऐसा नहीं कहूँगी।”

मुन्नी के माफी माँगते ही दादा के गुस्से का पारा फौरन उतर गया। सबका ध्यान फिर बिरजू और आशा पर चला गया। वे दोनों अभी तक नहीं आये थे। नन्हे इतनी देर से इन्तजार करते-करते थक गया था। उसने एक समझदार लड़के की तरह कहा, “मोहन भैया, बिरजू और आशा का तो कुछ इलाज करना ही पड़ेगा। एक-दो दिन की बात हो तो भुगत ली जाये। यह तो रोज-रोज का खटारा है।”

“हाँ, मोहन भैया, हम तो घण्टों यहाँ खड़े उनका इन्तजार करें और वे आते ही हुकम दें, ‘चलो’, जैसे मालिक अपने नौकर को हुकम देता है।” मुन्नी ने मुँह बनाते हुए नन्हे की बातों में नमक-मिर्च लगायी।

मोहन अपनी टोड़ी पर हाथ रखकर सोचने लगा। टोली का दादा होने के कारण वह हर काम बहुत सोच-समझकर करता था। जब तक बात को वह तीन-चार बार मन में दोहरा नहीं लेता था, मुँह पर

असमर्थ समझकर बारी-बारी से आशा और दादा का मुँह ताकना आरम्भ कर दिया था।

आशा ने फिर कहा, “बाग में आम के पेड़ के नीचे बैठा है। कई बार कहकर देख लिया। टस से मस नहीं होता। कहता है, घर नहीं जाऊँगा।”

दादा अब तक काफी सोच चुका था। उसने कहा, “लेकिन सवाल तो यह है कि वह घर चलता क्यों नहीं? आज ऐसी नई बात क्या हुई?”

“नई बात तो बस इतनी ही हुई कि बिरजू ने आज जो सवाल करके दिखलाये, वे सब गलत निकले। बेंतू मास्टर ने इस बात पर उसकी मरम्मत कर दी और कान पकड़कर कमरे से बाहर निकाल दिया। तब से वह बाग में आम के पेड़ के नीचे बैठा है और घर न चलने की जिद पकड़े हुए है।” आशा ने समझते हुए कहा। आशा और बिरजू दोनों ही चौथी कक्षा में पढ़ते थे, इसलिए आशा को बिरजू के बारे में सब-कुछ मालूम रहता था।

नन्हे अब तक चुपचाप खड़ा था, पर अब उससे चुप न रहा गया। उसने आश्चर्य से कहा, “यह इतनी-सी बात है?”

दादा के किसी साथी की बेंतू मास्टर मरम्मत कर दे, यह बात दादा को कम गुस्सा दिलाने वाली नहीं थी। उसका पारा फिर सातवें आसमान पर पहुँच गया। उसने गुस्से से आशा की ओर देखकर कहा, “अब तक खड़ी क्या मेरा मुँह देख रही थी? आते ही यह क्यों नहीं बताया कि बिरजू को बेंतू मास्टर ने पीटा है?”

“बताते-बताते ही तो बताती! आते ही तो कह दिया, और क्या वहीं से शोर मचाती हुई आती?” आशा ने ईंट का जवाब पत्थर से दिया। वह दादा से केवल एक साल ही छोटी थी, इसलिए दादा का



बाग के कोने में पेड़ के नीचे बिरजू मुँह फुलाये बैठा था

रोब जरा कम ही मानती थी।

दादा ने इस समय आशा से बहस करना ठीक नहीं समझा। उसने केवल इतना कहा, “चल, दिखला कहाँ है बिरजू ?”

बच्चा-पार्टी एक बार फिर स्कूल के अन्दर घुस गई। आशा सबसे आगे-आगे चल रही थी। स्कूल बच्चों से खाली हो गया था और चपरासी कमरों में ताले लगा रहा था। केवल अध्यापकों के कमरे में से अध्यापकों की जोर-जोर से बातें करने की आवाजें आ रही थीं। बच्चा-पार्टी ने कमरों की पंक्ति को घूमकर पार किया और स्कूल के बाग में जा पहुँची। बाग के एक कोने में आम के पेड़ के नीचे बिरजू मुँह फुलाये बैठा था।

दादा ने पूछा, “क्यों बिरजू, घर नहीं चलना है ?”

बिरजू ने कोई उत्तर नहीं दिया। निगाहें नीची किये अंगूठे से जमीन कुरेदता रहा।

नन्हे इतनी देर से खड़े-खड़े थक गया था। एक तो वह सबसे छोटा था, दूसरे उसे सबसे अधिक देर तक खड़े रहना पड़ा था। उसने बिरजू के पास जमीन में बैठते हुए कहा, “मोहन दादा, इस बेंतू मास्टर का तो कुछ इलाज होना ही चाहिए।”

“यह हरेक का इलाज ही करता रहता है,” मुन्नी ने तुनककर कहा। उसे घर जाने की जल्दी पड़ी हुई थी। इस समय वह हरेक बात जो विषय से जरा भी हटती हो उसे अच्छी नहीं लग रही थी।

परन्तु इस समय मोहन दादा को सबसे ज्यादा गुस्सा बेंतू मास्टर पर ही आ रहा था। वह बोला, “हाँ, इसका कुछ-कुछ इलाज जरूर करना पड़ेगा। यह जब-जब होती है और जिसकी चाहता है मरम्मत बना देता है। बेंतू क्या है पूरा लोहे का ढण्डा है, लोहे का ढण्डा !” कहने को तो मोहन ने मास्टर जी को इलाज करने की चुनौती दे दी,

लेकिन मास्टर जी का इलाज कैसे होगा, यह वह दस वर्ष का किशोर नहीं जानता था।

“इस लोहे-जैसी बेंतू के कारण ही तो मास्टरजी का नाम बेंतू मास्टर है, मोहन दादा,” नन्हे ने कहा। वह अपने साथियों को यह समझाना चाहता था कि इस बेंतू से मास्टरजी का कितना गहरा सम्बन्ध है।

आशा भी इस मौके पर चुपचाप रह जाने वाली नहीं थी। उसके भी एक बार बेंतू मास्टर ने कान खींचे थे। उसने कहा, “फिर मारने की कोई वजह भी तो हो। अगर बिरजू सवाल न करता, तो मारना ठीक था। पर वह तो सारे सवाल करके लाया था। गलत निकल आये तो इसमें उसका क्या दोष ? उसने सब ठीक-ठीक करने की कोशिश तो की थी।”

दादा ने समझदारी के साथ बेंतू मास्टर पर एक और अपराध लगाया, “अगर केवल पीटते ही, तो भी बात ठीक मान ली जाती। मगर सिर्फ सवाल गलत होने पर पीटा, कान भी उभे और कक्षा से बाहर भी निकाल दिया। एक अपराध के लिए तीन-तीन सजाएँ !”

“अधेर है, अधेर ! यहाँ तो बच्चों पर जितने जुल्म हों कम हैं।” सात वर्ष की बूढ़ी मुन्नी ने अपनी आदत के अनुसार बड़ी-बूढ़ियों की नक़ल करते हुए कहा।

“एक बेंतू मास्टर ही क्या, यहाँ तो सभी एक-से हैं,” मुन्ने ने अपने अनुभव से बात कही। उसे तोंद वाले मास्टर का वह चपत याद आ गया, जो दावात गिरने पर आज ही उसके गाल पर लगा था।

बात अब बेंतू मास्टर को छोड़कर स्कूल के सभी मास्टरों पर आ गई थी, इसलिए सभी को कहने के लिए लम्बा-चौड़ा क्षेत्र मिल गया था। इधर साथियों की बातों से बिरजू को काफी धीरज मिल रहा

था। उसे अब धीरे-धीरे विश्वास होता जा रहा था कि उसकी जरा-सी भी गलती नहीं थी और उसे बेकसूर पीटा गया था।

“देखो, कैसे मुँह फाड़-फाड़कर हँस रहे हैं !” दादा ने मुँह बना कर अध्यापकों के कमरे की ओर इशारा किया। कमरे में से जोर-जोर से हँसने की आवाजें आ रही थीं।

“बच्चों को मार-मारकर हँसते हैं।” मुन्नी ने दादी-बड़मा की तरह कहा।

“बच्चों को मार-मारकर तो सभी हँसते हैं। स्कूल में हो क्या, घर पर भी देख लो। भैया को तो मुझे पीटने में ही मजा आता है। उधर से आए एक चपत लगा गए, इधर से गए एक चपत लगा गए। जैसे मैं चपत खाने के लिए ही बना हूँ।” नन्हे ने स्कूल के मास्टरों के साथ-साथ घर वालों को भी घसीट लिया।

अब बातें करने का क्षेत्र और भी अधिक बढ़ गया था। घर का हर बच्चा कभी-न-कभी किसी-न-किसी गलती पर जरूर पीटा था। इसलिए सबके अपने अलग-अलग अनुभव थे। इस मौके पर अपने अनुभव सुनाने से छूकने वाला कोई नहीं था।

दादा बोला, “नन्हे, तुने घर की एक ही कही। घर पर तो जो न हो सो कम है। गिलास गिर जाये तो चपत। काम न करो तो चपत। स्कूल न जाओ तो चपत। वहाँ तो हर काम चपत से होता है।”

“और मुझ पर तो अम्मा ऐसी निगाह रखती हैं जैसे कहीं भाग ही जाऊँगी। जरा-सी देर दरवाजे तक खेलने गई नहीं कि आवाज लग जाती है : ‘आशा, जरा यह गिलास माँज दे, बेटी। रानी बेटी, ज़रा सरोता लाना। देख, क्या कर रही है, जरा मेरे साथ बीज छिलवा दे।’ जैसे घर में मैं ही एक नौकर रह गई हूँ।” नौ वर्ष की आशा ने

अपनी माँ की नकल करते हुए कहा।

“इसी को तो कहते हैं अत्याचार!” दादा ने तुरन्त कहा। ‘अत्याचार’ शब्द उसने आज ही अपनी हिन्दी की पुस्तक में पढ़ा था। इससे अच्छा मौका उसे इस शब्द के प्रयोग के लिए नहीं मिल सकता था। वह अपनी टोली के सदस्यों पर इसी प्रकार रोब डालता था। टोली के और सदस्य इस अत्याचार शब्द का मतलब नहीं समझते थे। वे हैरत से आँखें चौड़ाकर दादा की ओर देखने लगे।

दादा अत्याचार का अर्थ समझाने लगा, “अत्याचार का अर्थ होता है—इसका अर्थ होता है—” दादा की समझ में नहीं आ रहा था कि वह अपने मूर्ख साथियों को किस प्रकार इस कठिन शब्द का अर्थ समझाये। वह खुद तो इसका अर्थ भली प्रकार समझ रहा था परन्तु समझा नहीं पा रहा था। उसने एक बार फिर कोशिश की—“ये जो जोर-जुल्म होते हैं ना—बस इन्हीं को—इन्हीं को अत्याचार कहते हैं। तुम इसे यों समझो कि दुनिया वाले हम बच्चों पर जो करते हैं ना—वह सब अत्याचार ही होता है—समझ गए न?”

बच्चा-पार्टी का कोई भी सदस्य अपने सरदार के सामने बेसमझ नहीं बनना चाहता था, इसलिए चारों ने सिर हिलाकर बता दिया कि वे ‘अत्याचार’ का अर्थ अच्छी तरह से समझ गए हैं।

आशा ने फिर मतलब की बात पर आते हुए कहा, “लेकिन दुनिया वालों के इस अत्याचार को दूर कैसे किया जाये?”

“हाँ दादा, इस अत्याचार का तो कुछ इलाज होना ही चाहिए।” नन्हे ने फिर अपने सबसे प्रिय शब्द ‘इलाज’ का प्रयोग करते हुए कहा।

“हर चीज का इलाज नहीं होता। बड़ों की इस दुनिया में हम जब तक रहेंगे, तब तक तो ये अत्याचार हम पर होते ही रहेंगे।” मुन्नी



अब तक बिरजू बेंतू मास्टर की मरम्मत भूल गया था। टोली के पाँचों सदस्यों ने मिलकर एक नयी दुनिया बसाने का जो निश्चय किया था, उसमें उसका दिमाग बुरी तरह उलझ गया। बच्चों की नयी दुनिया बसाने का प्रस्ताव उसी ने रखा था, इसलिए उसे ही इसकी रूपरेखा भी तैयार करनी थी। इधर टोली के अन्य चारों सदस्य भी बेकार नहीं बैठे थे। उनके दिमागों में भी बच्चों की दुनिया की खिचड़ी रंध रही थी।

ठोड़ी पर हाथ रखे सोचते हुए जब दादा को बहुत देर हो गई, तो उसने सिर खुजलाते हुए कहा, “सबसे पहले तो नई दुनिया बसाने के लिए जगह की जरूरत पड़ेगी।”

“हाँ, और जगह भी ऐसी जहाँ एक भी बड़ा आदमी न पहुँच सके।” आशा ने दादा की बात को समझाया।

“लेकिन ऐसी जगह मिलेगी कहाँ?” नन्हे ने हाथ पर हाथ मारकर जोश से कहा। उसे एक ही बात पर बहुत देर तक सोचते रहने से चिढ़ थी। वह तो हर बात का भटपट तिया-पाँचा करना पसन्द करता था।

“यही तो एक समस्या है।” मुन्नी ने बड़ी-बूढ़ी की तरह कहा

ने मुँह बिचकाया। नन्हे के ‘इलाज’ से उसे सबसे ज्यादा चिढ़ थी।

“तो फिर इस दुनिया में रहते ही क्यों हो? एक नई दुनिया क्यों नहीं बसाते?” अब तक चुपचाप बैठे बिरजू ने एकादम जोश में भरकर कहा।

दादा ने भी जोश में भर बिरजू की हाँ में हाँ मिलाई, “हाँ, हमें एक नयी दुनिया बसानी ही पड़ेगी—एक बच्चों की दुनिया; जहाँ बड़ों के अत्याचार नहीं होंगे, जहाँ हम सुख से रहेंगे।”

सब बच्चों ने दादा की बात का जोरदार स्वर में समर्थन किया। सब बच्चे एक नयी दुनिया बसाने के लिए सहमत थे।

और ठोड़ी पर हाथ रखकर फिर सोचने लगी।

टोली के पाँचों सदस्य सिर झुकाये ठोड़ी पर हाथ रखे सोचने की मुद्रा में बैठ गए। बच्चों की दुनिया कहाँ बसाई जाये, यही एक समस्या थी, जो मुलभूते को नहीं कह रही थी। पाँचों नन्हे दिमाग जी-तोड़ मेहनत कर रहे थे। दादा ने मन-ही-मन अपनी भूगोल की पुस्तक के रावकों के नाम दोहराने प्रारम्भ कर दिए। पहले सबक का नाम था—टुण्ड्रा। टुण्ड्रा में जगह तो बहुत मिल सकती है लेकिन वहाँ बर्फ बहुत पड़ती है। ना बाबा, इतनी बर्फ में तो हम सब गल जायेंगे। तो फिर टेंगा के वनों में चला जाये। पर वहाँ तो वनों के अलावा और कुछ है ही नहीं। वहाँ तो जाड़े के साथ-साथ गर्मी में भी तपना पड़ेगा।

अभी दादा इतना ही सोच पाया था कि बिरजू बैठे-बैठे एकदम उछल पड़ा, “मिल गई! मिल गई! मार लिया पापड़ वाले को!”

“क्या मिल गई? किस पापड़वाले की आमत आई?” नन्हे ने आश्चर्य से बिरजू को देखकर कहा।

“अरे, बच्चों की दुनिया के लिए जगह मिल गई, नन्हे। अब एक नयी दुनिया बसेगी, बच्चों की दुनिया।” बिरजू ने उसी जोश में कहा।

“लेकिन वह जगह है कौन-सी?” दादा ने पूछा। उसे बिरजू की बुद्धि पर इतना भरोसा नहीं था कि वह कोई उचित स्थान इस बड़े काम के लिए ढूँढ़ पायेगा।

“भूतो की हवेली!” बिरजू ने चिल्लाकर कहा और गर्व से सीना फुलाकर अपने चारों साथियों की ओर देखा।

सुनते ही चारों के मुँह लटक गए। नन्हे ने हाथ नचाकर कहा, “खोजा पहाड़ निकली चुटिया! लो और सुनो, भूतों की हवेली में

बच्चों की दुनिया बसेगी। वहाँ तो बड़े-बड़े आदमी भी जाने से घबराते हैं।”

“तो बड़े-बड़े आदमी घबराया करें। हम डरने वाले नहीं हैं!” बिरजू ने घूँसा बनाकर हवा में हिलाया। पर बिरजू की जोशभरी बातों से किसी को जोश नहीं चढ़ा। बिरजू का हवा में घूँसा मारता बेकार गया।

भूतों की हवेली में बच्चों की दुनिया भी बसाई जा सकती है, यह विचार चारों बच्चों में से किसी के दिमाग में नहीं घुस पा रहा था। उनके मोहल्ले से कुछ ही दूर पर एक बहुत बड़ा खण्डहर सट्टल खड़ा था, जो ‘भूतों की हवेली’ के नाम से प्रसिद्ध था। कहते थे कि इसे किसी मुगल-काल के सामन्त ने बनवाया था पर अब इसमें भूतों का डेरा है। इन भूतों को देखा किसी ने नहीं था लेकिन रात में उस हवेली से उनकी भयानक-भयानक आवाजें ज़रूर सुनाई देती थीं। एक सुबह को भूतों की हवेली के बराबर वाली सड़क पर एक बुढ़िया भी बेहोश पड़ी मिली थी। तभी से रात को उस सड़क से कोई नहीं गुजरता। हाँ, दिन के समय उस सड़क पर सब आते-जाते थे। बच्चों की दौड़ भी भूतों की हवेली के चारों ओर पड़े खाली मैदान में ही हुआ करती थी। दादा को दौड़कर हवेली का चक्कर लगाने में पूरा सवा घंटा लगता था और नन्हे तो उस हवेली का दौड़कर चक्कर लगा ही नहीं पाता था। वह दौड़ते-दौड़ते हाँफ जाता था। इस प्रकार खेलने के लिए तो हवेली के आस-पास पड़ा खाली मैदान ठीक था, पर उसके अन्दर जाने की बात आज तक किसी ने नहीं सोची थी।

जब काफी देर तक बिरजू को अपनी बात का कोई उत्तर नहीं मिला, तो उसने दोबारा अपने चारों साथियों को जोश दिलाने की कोशिश की, “बस, सूख गया दम! इसी बूते पर नयी दुनिया बसाने

चले थे! भूतों से ही डर गए! अरे, अभी तो न जाने कितनी मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा। हिम्मत होनी चाहिए, हिम्मत!”

“सो तो हम में है।” दादा बिरजू की बातों पर ताव खा गया।

“कहाँ है? होती तो इस तरह भरियल बैल की तरह नहीं बंटे रहते! जरा रोचो, इन बड़े आदमियों से तो भूत ही अच्छे हैं। वे कम-से-कम अत्याचार तो नहीं करते।” बिरजू ने फिर उकसाया। उसकी जोशभरी बातों का जादू चारों बच्चों पर छाता जा रहा था।

नन्हे को बिरजू की आखिरी बात बहुत पसन्द आई। उसके विचार में भी बड़े आदमियों के अत्याचार भूतों से भी बढ़कर थे। भैया की चपतें बार-बार उसे याद आ रही थीं। वह बोला, “यह कही तुमने पते की बात, बिरजू। भूत अपने बच्चों को हर समय तो नहीं पीटते होंगे।”

नन्हे की बात से बिरजू का जोश दुगुना हो गया। उसने दोबारा हवा में मुक्का ताना और कहा, “यह हुई बहादुरी की बात! भूत ऐसे घोर अत्याचार तो नहीं करते जैसे दुनिया वाले करते हैं।”

आशा ने सम्भावना प्रकट की, “लेकिन अगर भूतों ने भी अत्याचार करने……”

“अगर-मगर क्या होती है! हम हवेली में पहुँचते ही भूतों को अपना मित्र बना लेंगे।” बिरजू ने आशा की बात बीच में ही काट दी।

भूतों को मित्र बनाने की बात दादा को बहुत भायी। वह तुरन्त बोला, “हाँ बिरजू, यह तो तेरी बात मुझे भी ज़ेची। हम हवेली में पहुँचते ही भूतों को मित्रता का सफेद भंडा दिखाएँगे और उनको अपना मित्र बना लेंगे। फिर वे हमें कोई दुख नहीं देंगे।”

सरदार के सहमत होते ही टोली के अन्य सदस्यों ने भी सहमत होना शुरू कर दिया। आशा बोली, “वैसे भूतों की हवेली में

एक बहुत अच्छी बात है कि वहाँ कोई बड़ा नहीं पहुँच सकता।”

“और उसमें जगह तो इतनी है कि पाँच क्या, पाँच हजार रह लें।” मुन्नी हजार से बड़ी कोई संख्या न जानती थी।

सबके सहमत होते ही बिरजू खुशी से उछल पड़ा। वह मुक्का हवा में तानकर दो बार चिल्लाया, “बच्चा-पार्टी जिन्दाबाद! बच्चों की दुनिया जिन्दाबाद!” इसका उत्तर बाकी चारों सदस्यों ने भी जोरदार नारों से दिया।

नारे लगने बन्द होते ही आशा बोली, “अब घर चलना है या सारे दिन स्कूल में बैठे नयी दुनिया ही बसाने रहोगे! मैं तो घर पर कह दूँगी कि यह इतनी देर दादा ने ही लगाई है।” उसे डर लग रहा था कि घर पहुँचते ही माँ पूछेगी कि इतनी देर कहाँ लगाई।



माँ के सामने आशा उसकी शिकायत करेगी, यह सुनते ही मोहन दादा के कान खड़े हो गये। इधर बिरजू को आशा की जल्दी घर जाने की जिद बहुत बुरी लगी। उसकी समझ में वे सब इस समय एक बहुत ज़रूरी काम कर रहे थे। इस ज़रूरी काम के कारण घर जाने में देरी भो हो जाये तो कोई बड़ी बात न थी। परन्तु मुन्नी को भी इस समय चान्नी का डर सता रहा था। उसने मास्टरों के कमरे की ओर इशारा करके कहा, “यह देखो, सब मास्टर भी चल पड़े। अब तो घर चलना ही चाहिए।”

सबकी निगाहें मास्टरों के कमरे की ओर उठ गईं। सब मास्टर अपना-अपना सामान लेकर कमरे से बाहर निकल आये थे और अब फाटक की ओर बढ़ रहे थे। पीछे चपरासी खाली कमरे के किवाड़ बन्द करके ताला लगा रहा था।

सबकी मर्जी देखकर दादा चलने को उठ खड़ा हुआ। एक बार फिर बच्चा-पार्टी स्कूल से बाहर निकलने को चल पड़ी। किन्तु इस बार पाँचों फाटक की ओर नहीं गये बल्कि स्कूल के पिछले दरवाजे से बाहर निकले। फाटक की ओर से जाने में उन्हें डर था कि कहीं कोई मास्टर उन्हें न मिल जाये और उनसे पूछ बैठे कि अब तक

सूख में क्या कर रहे थे।

मूँच से बाहर निकलते ही बिरजू ने फिर भूस में आग लगा दी, “निकल गया पसीना ! पड़ गया जोश ठण्डा ! जगह खोजने की ही जल्दी थी बस !”

“कौन कहता है कि जोश ठण्डा पड़ गया,” दादा ने मुँह बिचका कर कहा। बिरजू बार-बार उसके जोश को ललकार रहा था। इस बार वह सचमुच ही ताव खा बैठा। उसने गरजकर कहा, “सब कान खोलकर सुन लो, कल सुबह को चार बजे भूतों की हवेली में बच्चों की दुनिया बसाने के लिए घुसा जायेगा।”

“चार बजे !” नन्हे जैसे सोते से जाग पड़ा, “मोहन दादा, तब तक तो हमारे घर में कोई सोकर भी नहीं उठता।”

“बस, यही तो अच्छी बात है। अगर कल हमसे पहले घरवाले जाग जायेंगे तो हमें भूतों की हवेली में कैसे जाने देंगे ?” आशा ने हाथ मटकाकर कहा।

“घरवाले जागें या न जागें। चार बजे तो उठ लिए !” मुन्नी ने भी हाथ मटका दिये।

दादा फिर सोच में डूब गया। चार बजे सब उठकर कैसे तैयार हों, यह भी एक बड़ी भारी समस्या थी। दादा खुद आज तक कभी सुबह को चार बजे नहीं उठा था। पर क्योंकि उसने जोश में चार बजे का समय तय कर दिया था, इसलिए अब उसे बदल भी नहीं सकता था। इसमें उसका अपमान था। साथ-ही-साथ घरवालों की चोरी भूतों की हवेली में घुसने के लिए भी चार बजे उठना जरूरी था। अन्त में उसके एक तरकीब हाथ आ ही गई। भूतों की हवेली में चोरी-चोरी दुनिया बसाने के लिए इससे अच्छी कोई तरकीब नहीं हो सकती थी। उसने अपने चारों साथियों को चलते-चलते रोक लिया

और हलके-हलके उन्हें समझाना शुरू किया—“देखो, आज रात को मैं अपने भैया के कमरे से उनकी अलार्म-घड़ी उठा लाऊँगा और सुबह चार बजे का अलार्म लगाकर सो जाऊँगा। अलार्म मुझे ठीक चार बजे जगा देगा। मैं उठकर चुपचाप बिरजू को जगा दूँगा। बिरजू के कमरे में छुपे पर से चढ़कर मैं आराम से जा सकता हूँ। फिर...”

अभी दादा पूरी योजना बता भी न पाया था कि नन्हे बोल पड़ा, “पर दादा वह अलार्म तो तुम्हारे साथ-साथ घरवालों को भी जगा देगा।”

दादा को अपनी बात बीच में ही कट जाने से बहुत भुँसलाहट हुई, पर नन्हे ने भी बात सवा सोलह आने की कही थी। घरवालों के जामते ही सारी योजना खटाई में पड़ जाती थी।

टोली ने फिर चलना शुरू कर दिया। दादा की समझ में कोई हल नहीं आ पा रहा था। अन्त में बिरजू बोला, “हममें से किसी को रात-भर जागते रहना चाहिए, जो सुबह को चार बजे सबको जगा दे।”

बिरजू तो कहकर चुप हो गया। अब रात-भर जागने के लिए कौन तैयार हो ! आशा बोली, “मोहन दादा, मेरा विचार है आज रात को तुम थोड़ा जाग लो। तुम्हारे पास घड़ी भी है। सुबह ठीक चार बजे सबको जगा देना।”

अपने गले मुसीबत पड़ती देख दादा घबराया। वह हकलाता हुआ बोला, “बात तो तेरी ठीक है, आशा। पर मुझे रात को नींद आती है।”

“रात को नींद आती किसे नहीं ?” नन्हे ने पटाक से मुक्ता कस दिया।

मुन्नी ने सुलह का भंडा दिखलाया, “सारी रात अकेले जागना तो काम कठिन है। ऐसा करो कि आज रात दो आदमी जागें। बिरजू और नन्हे का मकान मिला हुआ है। आज दोनों खिड़की के पास सोयें। खिड़की तो दोनों की बिल्कुल ही लगी हुई है। रात-भर मजे से बातें करते हुए जागते रहें।”

“हाँ, और क्योंकि रात-भर जागेंगे इसलिए दिन में नींद भी आयेगी। सो हम हवेली में पहुँचते ही तुम दोनों के सोने का इन्तजाम कर देंगे।” आशा ने लालच दिखाया।

बिरजू और नन्हे के पास अब कोई चारा नहीं रह गया था। दोनों को न चाहते हुए भी रात-भर जागने के लिए तैयार होना पड़ा।

पर इतने-भर से ही भूतों की हवेली में बच्चों की दुनिया बसाने का काम पूरा नहीं हो जाता था। अब सवाल था कि वहाँ पर किस-किस चीज की आवश्यकता पड़ेगी, जो इस दुनिया से ले जाई जाये। दादा ने ही इस प्रश्न को उठाया, “हाँ तो, अब वहाँ सामान क्या-क्या ले जाना है ?”

“क्यों ? सामान ले जाने की क्या जरूरत है ? अरे भाई, भूत भी तो वहाँ किसी तरह से गुजर-बसर करते होंगे। उनके पास भी तो खाने-पीने, रहने-सहने का सामान होगा। जब उन्हें अपना मित्र बनायेंगे, तो सामान भी उन्हीं से ले लेंगे।” आशा ने आँख मटका कर कहा।

पर बिरजू ने फट से बात काट दी, “लो और सुनो ! एक तो भूतों को अपना मित्र बनाओ और ऊपर से उनका सारा सामान भी छीन लो। दो दिन में हवेली से निकाल बाहर करेंगे। हमें तो वहाँ जिन्दगी-भर रहना है, जिन्दगी-भर !”

“और फिर ना मिला हम बच्चों के लिए वहाँ कोई सामान। वक्त-

जरूरत के लिए कुछ तो ले चलना ही चाहिए,” छः वर्ष की मुन्नी ने कहा।

नन्हे ने सड़क पर पड़े एक कंकड़ में अपने बूट से किक मारते हुए पूछा, “क्यों दादा, भूत तो माँस खाते होंगे ?”

“और क्या नहीं !” मोहन दादा ने वस्ते को ठीक से कमर पर लटकाते हुए उत्तर दिया।

“क्या ? माँस खाते हैं ! तब तो मैं नहीं जाऊँगा भूतों की हवेली में !” आशा ने आश्चर्य से कहा। उसे माँस से बहुत घृणा थी।

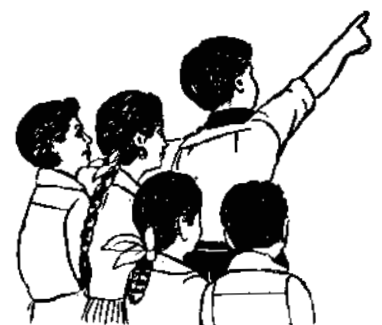
बात बिगड़ती देख दादा घबराया। एक के विदकते ही सबके विदक जाने का डर था। एक के सहारे ही दूसरा टिका हुआ था। बिरजू ने भटपट मरहम पट्टी की, “तु तो पगली है, आशा। माँस भूत ही तो खायेंगे हम तो नहीं खायेंगे।”

बिरजू की बात से आशा को थोड़ी-सी तसल्ली हुई। मोहल्ला अब बिल्कुल पास आ गया था और अभी तक यह निश्चय ही नहीं हो पाया था कि भूतों की हवेली में क्या-क्या सामान ले जाना है।

बिरजू एक बड़ के पेड़ की ओर इशारा करके बोला, “पहले इस पेड़ के नीचे कुछ देर रुककर यह तय कर लो कि कल क्या-क्या सामान ले जाना है। सब सामान रात को ही निकाल कर रख लेंगे। सुबह को देर नहीं होगी।”

“अरे, सामान ही क्या है !”

दादा ने एक पेड़ की ओर बढ़ते हुए कहा, “मैंने एक किताब में पढ़ा था कि आदमी की तीन



बिरजू ने एक पेड़ की ओर इशारा किया

सबसे बड़ी जरूरतें होती हैं। एक तो रहने के लिए स्थान, दूसरी खाने के लिए भोजन और तीसरी पहनने के लिए कपड़े। सो रहने के लिए तो भूतों की हवेली है ही। बस, खाने-पीने का सामान और पहनने के कपड़े और ले लो।”

दादा की बातों से सब पर उसका रौब छा गया। इतनी बड़ी बात इतनी सरलता से सुलभ जायेगी, यह चारों में से कोई भी नहीं जानता था। आशा ने बात को और धुन दिया, “बत तो एक-एक जोड़ी तो कपड़े पहनकर जायेंगे ही, एक-एक जोड़ी कपड़े और ले लेंगे। एक मँले हुए तो उन्हें धोकर सुखा दिया और दूसरी जोड़ी पहन ली और दूसरे मँले हुए तो पहले पहन लिए। खाने के सामान के लिए बना लो एक सूची।”

“ठीक है, मैं तो खाकी वाली निकर और रेशमी बूसेट पहनकर जाऊँगा और नीली वाली निकर साथ में ले जाऊँगा।” नन्हे ने खुशी से उछलते हुए कहा। उसे ऐसी बातों में रस आता था।

पर नन्हे की बात पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। इस समय गम्भीर बातें चल रही थीं। मुन्नी ने पूछा, “वहाँ खाना कौन बनायेगा?”

“हमारी पंडिताइन श्री आशाजी। बड़ी लम्बी-चौड़ी डींगें हाँकती थीं कि मुझे माँ ने यह बनाना सिखा दिया है, वह बनाना सिखा दिया है। अब वहाँ कुछ बनाकर खिलायेंगी, तब पता पड़ेगा कि रानी जी कितने पानी में हैं।” कहकर बिरजू ने आशा की ओर मुँह बिराया।

आशा चिढ़कर बोली, “तो क्या मैं झूठ बोलती हूँ? परांठे और आलू का साग तो ऐसा बनाती हूँ कि हाथ चाटते रह जाओगे मातृचन्द!” उसे मन-ही-मन प्रसन्नता हो रही थी कि अब उसे खाना बनाने को मिलेगा। वैसे तो काम के नाम वह बिलकुल सफाचट थी,



“मेरा विचार है आशा को ही खाने-पीने का सब काम सौंप दिया जाये।”

किन्तु खाना बनाने में उसे बहुत आनन्द आता था और इस काम के लिए वह हमेशा तैयार रहती थी।

“तो मेरा विचार है कि आशा को ही खाने-पीने का सब काम सौंप दिया जाये। भूतों की हवेली में भरपेट माल खिलाने की जिम्मेदारी आशा की रही। बस, अब वह सब सामान लिखवा दे, जिसकी जरूरत वहाँ पड़ेगी।” दादा ने अपने सिर का बोझ आशा पर डालते हुए कहा।

आशा ने फौरन उत्तर दिया, “मैं तैयार हूँ। अभी लिखवा लो कि खाना बनाने के लिए क्या-क्या सामान चाहिएगा।”

आशा का कहना था कि बिरजू ने झटपट कापी-पेंसिल निकाल ली। वह काम करने में टोली में सबसे आगे था। यदि सच-सच कहा जाये तो बच्चों की टोली में वह ही अकेला ऐसा था, जो हमेशा काम करने के लिए तैयार रहता था। वह जो बात कहता था उसे पूरा करके ही दम लेता था। आशा और मोहन दादा उसकी इस आदत के कारण उसे बुद्ध समझते थे पर मुँह से कुछ न कहते थे, क्योंकि उन्हें डर था कि कहीं बिरजू उनका काम करना बन्द न कर दे।

आशा ने लिखवाना शुरू किया, “एक अंगीठी, एक तवा, एक बेलन, एक छोटी परात, एक चिमटा, एक कलछी, सेर-भर धी, कम-से-कम चार सेर आलू, आटा, मैदा, लकड़ियाँ, एक पतली, दो थाली, चार कटोरी...”

सारे सामान को लिखकर बिरजू ने पाँचों साथियों में बाँट दिया कि कौन क्या-क्या सामान लायेगा। जो बच्चा जिस सामान को आसानी से ला सकता था उसने वह लाने का वायदा कर लिया। नन्हे केवल एक चम्मच ही ला सकता था, इसलिए उसको एक चम्मच लाने का ही काम सौंपा गया। मुन्नी के घर आज ही टिकिया और पपड़ियाँ

बनी थीं। मुन्नी ने उनको लाने का वायदा किया। दादा ने सामान इकट्ठा करने का काम भी बिरजू को ही सौंप दिया। इस प्रकार अब बिरजू जिम्मेदार हो गया कि सारा सामान भूतों की हवेली तक पहुँच जाये। दादा ने खुद कोई काम अपने हाथ में नहीं लिया। वह काम करने से जरा बचता था।



4

बिरजू और नन्हे ने रात-भर जागने का वायदा किया था। उन्हें रात-भर जागकर सुबह के चार बजने की प्रतीक्षा करनी थी। इसलिए दोनों ने शाम को ही अपने-अपने बिस्तर एक-दूसरे के मकान से मिलने वाली खिड़की के पास बिछा दिए। बिस्तरे इस प्रकार बिछाए गए थे कि उन पर लेटे-लेटे ही नन्हे को बिरजू का सारा कमरा और बिरजू को नन्हे का सारा कमरा साफ दिखाई देता था। बिस्तर बिछाकर दोनों ने रातों की साँस ली। दोनों को डर सता रहा था कि कहीं घरवाले आज खिड़की के पास सोने को मना न कर दें। पर इस तरह की कोई बाधा पैदा न हुई। अब बिरजू और नन्हे रात-भर आराम से बातें कर सकते थे।

बिरजू जब खा-पीकर रात को सोने के लिए बिस्तर पर चढ़ा, तो उसने खिड़की से सिर निकालकर नन्हे के कमरे में झाँका। नन्हे का बिस्तर खाली पड़ा था। उसने आवाज दी, “नन्हे, नन्हे, ओ नन्हे!”

नन्हे बराबर के कमरे में बैठा खाना खा रहा था। बिरजू की आवाज सुनकर झटपट थाली छोड़कर सोने वाले कमरे में आ गया, “क्या है?”

रही है।”

“मैं कब कह रहा हूँ कि मुझे नहीं आ रही, “बिरजू ने ऊँघते हुए उत्तर दिया। उसकी पलकें भी नींद से झुकी जा रही थीं।

“हमने बहुत बुरा किया, बिरजू जो आशा की बात मान ली। रात-भर जागना तो बहुत कठिन काम है,” नन्हे ने आँखें मलते हुए कहा।

“अरे, यह बात तेरी अब समझ में आई। मैं तो रात भर जागने के लिए तैयार होते ही समझ गया था कि एक बहुत बड़ी मुसीबत भोल ले ली है,” कहकर बिरजू ने खिड़की की तरफ को करवट बदली।

कमरे में फिर शान्ति छा गई। वातावरण पर अंधेरे ने पूर्ण अधिकार कर लिया था। सारा मोहल्ला गहरी नींद में सोया पड़ा था।

अचानक बिरजू ने पूछा, “नन्हे, तूने कल का सारा सामान निकाल लिया न?”

प्रश्न सुनते ही नन्हे बिस्तर पर उछलकर बैठ गया और तकिए के नीचे से चम्मच निकालकर बिरजू को दिखला दी।

बिरजू ने भी अपनी खाट के नीचे इशारा करके कहा, “मेरा सामान यह रहा।” नन्हे ने झाँककर बिरजू की खाट के नीचे देखा। उसकी खाट के नीचे एक बड़ा-सा टाट का थैला, जिसमें सामान भरा था और एक बड़ा कटोरदान रखा था। सामान देखकर नन्हे फिर बिस्तर पर लेट गया।

रात-भर जागते रहने के लिए जरूरी था कि दोनों आपस में बातें करते रहें, इसलिए बिरजू फिर बोला, “नन्हे, जरा सोच तो हम कोई जरूरी सामान भूले तो नहीं जा रहे। कहीं ऐसा न हो कि वहाँ जाकर पछताना पड़े।”

“क्या कर रहा था?” बिरजू ने खिड़की से हटकर बिस्तर पर लेटते हुए पूछा।

“देखता नहीं खाना खा रहा हूँ,” कहकर नन्हे ने मुँह खोलकर मुँह का ग्रास दिखा दिया और भागकर वापस कमरे में चला गया। खा-पीकर नन्हे भी अपने बिस्तर पर आ डटा। बिरजू एक कापी पर झुका कुछ लिख रहा था।

“क्या लिख रहा है रे?” नन्हे ने टांगें बिस्तर पर फैलाते हुए पूछा।

“सान्ना, लेट मत। लेटने से तो नींद आ जायेगी। तू भी कापी-किताबें ले आ और स्कूल का काम कर ले। मैं भी स्कूल का ही काम पूरा कर रहा हूँ।” बिरजू ने नन्हे को सावधान किया।

स्कूल का काम करना नन्हे को कभी नहीं भाया था। वह भूतों की हवेली में भी केवल इसीलिए जाने को तैयार हुआ था कि वहाँ स्कूल के मास्टर्स का काम नहीं करना पड़ेगा। वह लेटे-लेटे ही बोला, “मेरे दिमाग में कीड़े नहीं पड़े जो अब भी किताबों का पीछा न छोड़ें। तू जो कापी काली कर रहा है इसे देखेगा कौन? कल तो हम भूतों की हवेली में जा रहे हैं।”

बिरजू स्कूल का काम इसलिए कर रहा था कि कहीं आज की तरह कल भी बँतू मास्टर मरम्मत करके कमरे से बाहर न निकाल दे। नन्हे की बात ने उसे चौंका दिया। उसने अब तक इस बात पर ध्यान ही न दिया था। सचमुच आज स्कूल का काम करना उसे बहुत बड़ी बेवकूफी लगी। उसने तुरन्त कापी बन्द करके सिरहाने रख दी और बिस्तरे पर टांगें फैला दीं।

कुछ देर यूँही चुप पड़े गुजर गई। नन्हे की आँखों में नींद भरने लगी। उसने एक करवट बदलकर कहा, “बिरजू, मुझे तो नींद आ

नन्हे सोचने लगा। अचानक उसे कुछ याद आया। उसने पूछा, “बिरजू, भूतों की हवेली में बिजली तो नहीं होगी?”

“क्यों नहीं होगी! भूत रात को पढ़ते कैसे होंगे?” बिरजू ने चटपट उत्तर दिया।

“वाह-वाह-वाह! भूत भी कहीं पढ़ते हैं!” नन्हे ने बिरजू को चिढ़ाया।

बिरजू नन्हे से बड़ा था और उसे अपनी बुद्धि पर भी गर्व था। वह भला कैसे सहन कर सकता था कि नन्हे उसे चिढ़ाए। वह तुरन्त बोला, “है तू अक्ल का भौंदू ही! अरे, भूत नहीं तो भूतों के बच्चे तो पढ़ते होंगे।”

इस दाव से नन्हे चारों खाने चित्त आया। उसकी मम्मी ने उसे बता रखा था कि सभी बच्चे पढ़ते हैं। इसलिए उसने सोचा कि भूतों के बच्चे भी जरूर पढ़ते होंगे। वह बोला, “तब तो फिर टार्च ले जाने की जरूरत ही नहीं। बिजली तो वहाँ पर होगी ही।”

“जरूरत है और बहुत ज्यादा जरूरत है। टार्च जरूर ले जानी पड़ेगी।” बिरजू फिर बड़प्पन से बोला।

“क्यों?” नन्हे की समझ में यह गोरख-धन्धा नहीं आया।

“इसलिए कि वहाँ पर बिजली नहीं है। भूतों के बच्चे दिन में पढ़ते हैं, रात को नहीं। अगर वहाँ बिजली होती तो रात को हवेली में रोशनी दिखाई न पड़ती? तू ने कभी रात को भूतों की हवेली में उजाला देखा है?” बिरजू ने नन्हे को समझाया।

बिरजू का एक-एक अक्षर नन्हे की समझ में आ गया। उसने लेटे-लेटे ही सुझाव रखा, “तो फिर एक टार्च कहीं से और उड़ाओ।”

“कहीं से नहीं, इसका इन्तजाम तो तुम्हें ही करना है। हमारी टार्च का तो मसाला ही ‘बोखो-दम’ हो गया है। परसों ही तो तेरे सामने

मसाले को तोड़-तोड़कर स्लेट की वस्तियाँ निकाली थीं।" बिरजू ने अपनी मजबूरी दिखाई।

नन्हे ने सोचते हुए कहा, "टार्च तो हमारी सवा सोलह आने ठीक है पर वह रखी उस कमरे में है, जिसमें पापा सो रहे हैं। अगर सुबह की बजाय कल दोपहर को भूतों की हवेली में चला जाए, तो मैं टार्च ला सकता हूँ।"

"बस-बस, तू तो सारा किया-कराया चौपट करना चाह रहा है! अगर दोपहर तक हम वहाँ पर रुक गये, तो बस मेरी शामत समझो। मैंने जो सामान खाट के नीचे इकट्ठा कर रखा है, इसमें आधी से ज्यादा चीजों की धरवालों को सुबह ही जरूरत पड़ेगी। और तुम्हें तो पता ही है मेरे पिताजी जब मारने पर उतरते हैं, तो बेंतू मास्टर को मात कर देते हैं," बिरजू ने घबराकर कहा। थोड़ी देर के लिए दोनों नन्हे बहादुरों की आँखों से नींद हवा हो गई।

"तो फिर तू ही बता मैं क्या करूँ?"

"इसमें भी कुछ बताने की बात है। दबे पाँव अपने पापा के कमरे में पहुँच जा और अलमारी में से टार्च उठाकर सीधा लौट आ," बिरजू ने सुझाया।

"ना बाबा, अगर कहीं आहट सुनकर पापा जाग गये तो खर नहीं," नन्हे ने सहमकर कहा।

"बस, बच्चों की दुनिया बसाने का यही हीसला है! इसी बूते पर शेर बनता था! आज पोल खुली है, बच्चू! बड़ी-बड़ी डींगें हाँकता था!" बिरजू ने जोश दिलाने की कोशिश की।

नन्हे तमककर बोला, "देख बिरजू, तू मुझे ताव मत दिलाया कर। मैं बड़ा खतरनाक आदमी हूँ।"

"किसी में ताव नाम की कोई चीज हो जब ना। अगर थोड़ा-सा

भी जोश होता तो अब तक बिस्तरे पर न होता। अब तक तो पापा के कमरे में दिखाई पड़ता," बिरजू ने और तमक-मिच लगाया।

"ले, तू भी क्या याद रखेगा कि किस शेर से पाला पड़ा था!" कह कर नन्हे बिस्तर पर से कूद पड़ा और कमरे से बाहर निकल गया।

बिरजू ने सन्तोष की गहरी साँस ली! उसकी चाल काम कर गई थी।

कठिनाई से पाँच मिनट भी और न गुजरे थे कि नन्हे कमरे में लौटता दिखाई दिया। बिरजू ने कहा, "शाबाश, यह काम किया है तूने बहादुरी का, नन्हे। टार्च ले आया ना?"

"नहीं लाया।" नन्हे ने मरे हुए स्वर में कहा।

बिरजू जैसे आसमान से गिर पड़ा। उसने आश्चर्य से पूछा, "क्यों? टार्च क्यों नहीं लाया?"

"बिरजू, अगर पापा जाग जायेंगे तो क्या होगा?" नन्हे ने सहमते हुए पूछा।

"घत्तरे की! रोते गए मरों की खबर आए! अरे, जब तू दबे पाँव बिना आहट किए जाएगा तो पापा कैसे जाग जायेंगे?" बिरजू ने हाथ पर हाथ मारकर कहा।

नन्हे चुपचाप खड़ा बिरजू का मुँह ताक रहा था। बात अब उसकी समझ में जड़ पकड़ रही थी। अगर वह आहट ही न करेगा तो पापा जागेंगे कैसे?

बिरजू ने फिर साहस बँधाया, "देख, फिर जा, चुपचाप धीरे-धीरे कदम रखते हुए जाना और टार्च उठाकर उसी प्रकार वापस लौट आना। समझ गया ना?" भूतों की हवेली में टार्च ले जाना इस समय बिरजू बहुत आवश्यक समझ रहा था।

नन्हे बिना कुछ जवाब दिए फिर कमरे से बाहर निकल गया। अंधेरे

में टटोल-टटोलकर चलता हुआ वह पापा के दरवाजे तक पहुँच गया। वहाँ पहुँचकर वह एक बार फिर ठिठका। पहली बार भी वह यहीं तक आकर लौट गया था। लेकिन इस बार वह साहस कर कमरे में घुस गया। अलमारी कमरे के बायीं ओर थी। नन्हे अन्दाज से अलमारी के पास पहुँचा। टटोल-टटोलकर उसने अलमारी के किवाड़ ढूँढ़ लिए। बिजली वह इसलिए नहीं जला सकता था कि उससे पापा के जग जाने का डर था। टार्च अलमारी के सबसे नीचे के खाने में रहती थी। उसने नीचे के खाने में टटोला। उसके हाथ में टार्च आ गई। अब तक नन्हे ने आधा मैदान मार लिया था। उसका साहस बढ़ता जा रहा था।

टार्च उठाकर नन्हे ने हल्के से अलमारी को बन्द किया और वापस लौट पड़ा। अभी वह दो-चार कदम ही चला था कि कमरे में बिछी हुई खाट से टकराकर धड़ाम से गिर पड़ा।

आवाज सुनकर नन्हे के पापा जाग गये। उन्होंने गरजकर पूछा, "कौन है?" और हाथ बढ़ाकर दीवार पर लगा बिजली का बटन दबा दिया। कमरा प्रकाश से जगमगा उठा। नन्हे ने झटपट टार्च निकर की जेब में रख ली।

"अरे नन्हे, तू! तू

है?" नन्हे के पापा ने आश्चर्य से नन्हे को देखकर पूछा।

नन्हे थर-थर काँपने लगा। जिस बात का उसे डर था आखिर वही होकर रही। पापा की मार को वह बहुत अच्छी तरह जानता था। वह या तो मारते ही नहीं थे, और अगर मारते थे तो गाल सुजा देते थे। इस समय कोई अच्छा-सा बहाना भी उसे नहीं सूझ रहा था।

पापा ने फिर पूछा, "क्या बात है, बेटा? कुछ तो बताओ?"

अचानक ही नन्हे को एक बहुत ही सुन्दर उपाय सूझ गया। वह डरते-डरते बोला, "पेशाब करने को उठा था, पापा।"

"तो पगले अब तक बताया क्यों नहीं? तुम्हसे कितनी बार कहा है कि रात को जब पेशाब करने उठा करे, तो बिजली खोल लिया कर। चल, अब पेशाब करके आ!" कहकर पापा ने प्यार से नन्हे के गाल पर एक हल्का-सा चपत लगाया।

जान बची सो लाखों पाये! नन्हे ने झूठ-मूठ मोरी पर जाकर पेशाब किया और वापस अपने सोने के कमरे में चला गया।

नन्हे को देखकर बिरजू ने पूछा, "क्यों अब की बार तो ले आया ना टार्च?"

"ले अम्मा तेरा सिर! तू ने तो फँसवाने में कोई कसर छोड़ी ही न थी। वह तो मौके पर सूझ काम कर गई, नहीं तो अभी इकट्ठा ही भूतों की हवेली पहुँचा दिया जाता!" नन्हे ने मुँह बिचकाकर बिरजू को टका-सा जवाब दे दिया और बिस्तर पर टांगें फैलाकर लेट गया। निकर की जेब से टार्च निकालकर उसने तकिए के नीचे रख ली।

बिरजू के बार-बार पूछने पर उसने सारी घटना बिरजू को सुना दी। सुनकर बिरजू ने नन्हे की बुद्धि की दाँद दी और फिर दोनों बिस्तरों पर लेटे हुए सुबह के चार बजने का इन्तजार करने लगे।



"अरे नन्हे तू। तू यहाँ क्या कर रहा है?"

यहाँ क्या कर रहा



घण्टाघर के चार के घण्टे सुनते ही बिरजू हड़बड़ाकर उठ बैठा। उसने नन्हे के कमरे में भाँककर देखा। नन्हे आराम से अपने बिस्तर पर सोया पड़ा था। यह देखते ही बिरजू के तन-बदन में आग लग गई। उसने सारी रात एक मिनट को भी पलकें नहीं भ्रपकाई थीं लेकिन नन्हेराम बड़े तेज थे। आधा घण्टे का मौका मिलते ही उन्होंने लम्बी तान ली थी। बिरजू ने खिड़की से हाथ निकालकर उसे भ्रंभोड़ा। आँखें मलते हुए वह भी उठ खड़ा हुआ, “क्या चार बज गए?”

“नहीं, अभी कहाँ बजे हैं! अभी तो चार-पाँच घण्टे और सोया जा सकता है!” बिरजू ने कुढ़ते हुए कहा।

“सूरज तो निकल भी आया,” नन्हे ने बिरजू की कुढ़न पर ध्यान न देकर खिड़की से दूर पहाड़ी पर निकलते सूर्य को देखकर कहा।

“और क्या तुम्हारे लिए रुका रहता! अब जल्दी से मकान से बाहर निकलकर आओ। मैं भी बाहर ही आता हूँ।” कहकर बिरजू ने खाट के नीचे से धैला और कटोरदान निकाला।

दोनों नन्हे बहादुर चुपचाप बिना आहट किए अपने-अपने घर से निकलकर मोहल्ले में आ गये। इस समय सूर्य निकल आया था और

उसका हल्का-हल्का प्रकाश चारों ओर फैल गया था।

अब दोनों के सामने समस्या थी अपनी टोली के बाकी तीनों मदम्यों को जगाने की। मोहन दादा दोंमजिले पर सोता था। उसका नुक्कड़ का कमरा था। उनके कमरे से लगता हुआ ही एक बिजली का खम्भा लगा हुआ था। चुपचाप सरदार को बुलाने के लिए टोली के गइरस इसी खम्भे का प्रयोग किया करते थे। बिरजू पहले भी कई बार इस खम्भे पर चढ़कर दादा को बुला चुका था। इसलिए उसे इसका अच्छा अभ्यास था। इस बार भी वही खम्भे पर चढ़ा। खम्भे में चिपटकर धीरे-धीरे सरकता हुआ वह दादा के कमरे की खिड़की तक पहुँच गया। कमरे में दादा आराम से दोहर ताने सो रहा था। बिरजू ने आवाज दी, “मोहन दादा, मोहन दादा, उठो। चार बज गए।”

पर बिरजू की आवाज से मोहन दादा के कानों पर जूँ भो न रेंगी। वह आराम से तकिर में मुँह छिपाए पड़ा रहा। अब बिरजू को पता चला कि दादा को जगाना कोई हँसी-खेल नहीं था। पर वह भी जल्दी से दार मानने वाला नहीं था। उसने फिर कोजिश की, “ओ दादा! ओ मोहन-दादा! सोते ही रहोगे क्या?”

“हँ हँ!” कहकर मोहन दादा ने एक करवट ली और फिर सो गया।

अब तो बिरजू भल्ला उठा। ज्यादा देर तक बिजली के खम्भे पर टमा रहना उसके बस की बात नहीं थी। वह पूरा जोर लगाकर चिल्लाया, “ओ कुम्भकरण के चाचा! अब तो जाग जा।”

“इतनी जोर से मत चिल्ला। मारा मोहल्ला जाग जायेगा।” नीचे से नन्हे ने सावधान किया।

“तो फिर इस कुम्भकरण को किसी तरह जगाऊँ भी?” बिरजू

ने नीचे खड़े नन्हे की ओर देखकर पूछा।

“ठहर, मैं अभी तरकीब बताता हूँ,” कहकर नन्हे ने सड़क पर पड़े एक लम्बे से सरकण्डे को उठाया और उसे बिरजू की ओर उछाल कर बोला, “ले, इससे जगा।”

सरकण्डा ऊपर को उछला और बिरजू के पास तक पहुँचकर फिर नीचे गिर गया। बिरजू पहले से तैयार नहीं था इसलिए वह सरकण्डे को नहीं लपक सका।

“बस, इसी तूते पर कहता था कि मैं क्रिकेट का चैम्पियन बनूँगा! इन हजारों, मनकड़ को कुछ खेलना नहीं आता। मैं एक ही ओवर में पाँच खिलाड़ियों को आउट किया करूँगा एक सरकण्डा तक तो लपका नहीं गया!” नन्हे ने बिरजू को चिढ़ाया।

“तूने पहले से बताया कहाँ कि सरकण्डा ऊपर को फेंक रहा है। अब की बार उछाल। न लपक लूँ तो कुछ बात रही।” बिरजू ने टंगे-टंगे ही उत्तर दिया।

नन्हे ने एक बार फिर सरकण्डा उछाला लेकिन इस बार भी बिरजू उसे नहीं लपक सका और सरकण्डा फिर जमीन पर आ गिरा।

नन्हे ने फिर चुटकी ली, “बिरजू, मेरा स्याल है तू तो एक ही बार कैच पकड़कर ग्यारह-के-ग्यारह खिलाड़ी आउट कर दिया करेगा, क्यों?”

“अगर तू मुझसे तीन कोस दूर पर सरकण्डा उछालेगा तो भला मैं कैसे पकड़ लूँगा! मेरे हाथ के पास को उछाल। देख, कैसे नहीं लपकता?” बिरजू मन-ही-मन कुढ़ रहा था।

“हाथ के पास ही क्यों, हाथ में ही न पकड़ा दूँ! तब भी तो पकड़ना आसान काम नहीं!” नन्हे ने जले पर नमक छिड़का।

बिरजू फुँककर राख हो गया। एक तरफ तो नन्हे उसे जला रहा

था, दूसरी तरफ बिजली का खम्भा उसके हाथ से छूटा जा रहा था। उसने कहा, “अब जल्दी से उछालता है या नहीं। यह समझ ले कि मैं दादा को जगाने के लिए दोबारा खम्भे पर नहीं चढ़ूँगा। तुम्हें ही चढ़ना पड़ेगा।”

अब तो नन्हे धबराया। उसने सरकण्डे को ठीक तरह से फिर उछाला। इस बार बिरजू ने उसे लपक लिया और खिड़की की राह से उसकी नोक मोहन दादा की नाक से छुआ दी। नाक में खुजली होने पर दादा हड़बड़ाकर उठ बैठा। उसने बिरजू को देखकर पूछा, “यह क्या शैतानी है?”

बिरजू बोला, “शैतानी नहीं कुम्भकरण की नानी कहो, दादा! भटपट नीचे उतर आओ नहीं तो यह नानी कुम्भकरण को एक बार फिर खबर लेगी।” और वह रपटता हुआ खम्भे से नीचे उतर आया।

कुछ देर बाद दादा भी नीचे उतर आया। आशा और मुन्नी को जगाना आसान काम था। वे दोनों नीचे के कमरों में हो सोती थीं। बिरजू उन दोनों को भी बुला लाया। सब सामान लेकर वे भी बाहर निकल आईं। यह सारा काम इतनी सावधानी और शान्ति के साथ किया गया कि एक भी बड़ा आदमी न जाग सका।

मुन्नी के हाथ में एक रंग-बिरंगे डिब्बे को देखकर नन्हे ने पूछा, “इसमें क्या है, मुन्नी?”

“मेरी गुड़िया!” मुन्नी ने इठलाते हुए कहा।

“मोहन दादा, इस तरह का बेकार का सामान भी भूतिया हवेली में ले जाया जायेगा,” आशा ने शिकायत के स्वर में दादा से कहा।

“यह बेकार की चीज है! इसके बिना तो मैं एक दिन भी भूतों की हवेली में न रह पाऊँगी,” मुन्नी ने कहा। वह मौके पर बातें तो बड़ी-बूढ़ियों-जैसी करती थी पर खेलती हमेशा गुड़िया से थी।



“इसके बिना तो मैं एक दिन सी भूतों की हवेली में न रह पाऊँगी !

आशा को जितना खाना बनाना अच्छा लगता था उतना ही मुन्नी को गुड़िया से खेलना। वह सारे दिन बैठे-बैठे गुड़िया के गहने और कपड़े बनाती रहती थी।

नन्हे बोला, “तो फिर मैं भी अपना गुड़ड़ा लेकर आता हूँ।”

“ले आ, तुझे रोक कौन रहा है ! पर वह टेढ़ी-मेढ़ी टांग का भूतों की हवेली में ले जाने लायक हो जय न !, भूत भी देखेंगे तो हँसते-हँसते लोट-पोट हो जायेंगे,” मुन्नी ने नन्हे को चिढ़ाया।

“देख री, अब से मेरे गुड़ड़े को टेढ़ी-मेढ़ी टांग का मत कहना नहीं तो भगड़ा हो जायेगा। इस मोहल्ले में इसकी जोड़ का एक भी नहीं है,” नन्हे ने गरजकर कहा। उसे इस बात का गर्व था कि मोहल्ले में केवल उसके पास ही गुड़ड़ा है।

“देखता रह, मेरी गुड़िया जो गुड़ड़ा ब्याह कर लायेगी, उसे देख कर दाँतों तले अंगुली दबा लेगा। पूरा सोलहवीं का चाँद होगा, चाँद ! अपनी चाँद-सी गुड़िया के लिए चाँद-सा गुड़ड़ा खोजूँगी,” मुन्नी ने हाथ मटकाते हुए कहा।

टोली के बाकी तीनों सदस्यों को मुन्नी और नन्हे की बातों में रस आ रहा था। दादा ने कहा, “इस पहेली को हवेली में चलकर सुलझाना कि किसका गुड़ड़ा अच्छा है और किसको गुड़िया अच्छी है। अब यहाँ से तो चलो। तू जल्दी से भागकर अपना गुड़ड़ा ले आ, नन्हे।”

दादा के कहते ही नन्हे भटपट दौड़कर घर से अपने गुड़ड़े का डिब्बा उठा लाया। हवेली में सारा सामान पहुँचाने की जिम्मेदारी बिरजू को सौंपी गई थी। वह सारा सामान सूची से मिलाने लगा। सामान पूरा हो नहीं था बल्कि एक डिब्बा ज्यादा भी था। उसे देखकर उसने पूछा, “यह डिब्बा कौन लाया है ?”

“मैं !” मुन्नी ने सिर हिलाकर कहा।

“क्या है इसमें ?”

“गुड़िया का सामान।”

“ओहो, तो रानीजी की गुड़िया पूरे साज-सामान के साथ तशरीफ ले जा रही हैं !” आशा ने आँख मटकाकर कहा।

“देख आशा, तू मेरी गुड़िया को देखकर मत जला कर। बिना सामान के वह कैसे सुबह को नहायेगी ? कैसे खाना खायेगी ? कैसे चुटिया करेगी ? कैसे सोयेगी ? बिना सामान के तो वह एक पल भी नहीं रह सकती,” मुन्नी ने रौब से कहा।

“अच्छा तो तेरी गुड़िया नहाती-धोती भी है ?” दादा ने आश्चर्य से पूछा।

“और नहीं तो क्या इस आशा की तरह आलसी है, जो हफ्ते में बस एक बार नहाती है !” मुन्नी ने ताना कसा।

नन्हे चुपचाप खड़ा रहा। यहाँ पर बोलने से उसकी शامت आ सकती थी। असल में वह अपने गुड़ड़े को न कभी नहलाता था, न कभी खिलाता था और न ही कभी सुलाता ही था। इसलिए यदि इस समय मुन्नी यहाँ पर मुन्ने के गुड़ड़े का जिक्र कर देती, तो उसे बगलें भाँकनी पड़तीं। पर ठीक मौके पर आशा के कारण मुन्नी उसके गुड़ड़े को भूल गई थी। नन्हे मन-ही-मन सोचने लगा कि वह भूतिया हवेली में जाकर जरूर अपने गुड़ड़े को नहलाया-खिलाया करेगा, नहीं तो मुन्नी उसे रोज चिढ़ायेगी।

“अब यहाँ से सरकना है या नहीं ?” बिरजू ने थककर कहा। वह गुड़िया-गुड़ों की नोक-झोंक से बोर हो रहा था।

“हाँ, हाँ, अब समय बरबाद मत करो। अगर कोई बड़ा आदमी जाग गया तो खैर नहीं !” कहकर टोली का दादा आगे बढ़ा।

सारा सामान टाट के दो बड़े-बड़े थैलों में भर लिया गया था। एक थैला बिरजू ने अपनी पीठ पर लादा और दूसरा दादा ने। इस प्रकार बच्चा-पार्टी भूतिया हवेली में बच्चों की नयी दुनिया बसाने के लिए चल पड़ी।





बच्चा-पाटी के पाँचों सदस्य पूरे साज-सामान से भूतिया हवेली के सामने आ खड़े हुए। इसी खण्डहर हवेली में उन्हें बच्चों की नयी दुनिया बसानी थी।

दादा ने गैब भाड़ते हुए कहा, “बिरजू देखो, सामने हमारी नयी दुनिया का फाटक है। इसे सबसे पहले तुम्हीं खोलो।”

“यह बात तो ठीक नहीं, मोहन दादा। नयी दुनिया का फाटक तो सरदार के ही हाथ से खुलना चाहिए। इसे तो तुम ही खोलो,” नन्हे ने तुरन्त टोका।

“यह बात है तो मैं ही शुभ आरम्भ करता हूँ,” कहकर दादा कमीज की बाँह चढ़ाकर फाटक की ओर लपका।

मुन्नी ने टोका, “हवेली के फाटक पर कहीं भूत तो पहरा नहीं दे रहे हैं?”

मुन्ते ही दादा के प्राण खुक हो गए। सारा जोश हवा हो गया। वह उलटे पैरों वापस लौटता हुआ बोला, “हाँ बिरजू, कहीं फाटक पर भूत न हों! भूत दिखाई नहीं देते। कभी पकड़कर पूरा ही गड़प कर जायं!”

यहाँ बिरजू की बहादुरी भी जवाब दे गई। भूतों का सामना करने



दादा कमीज की बाँह चढ़ाकर फाटक की ओर लपका।

का साहस उसमें भी नहीं था। वह भी बगलें भाँकने लगा।

नन्हे कुछ साहस करके बोला, “दादा, भूत दिखाई तो नहीं देते पर बोलते तो जरूर होंगे। आवाज देकर पूछ लो कि वे फाटक पर हैं या नहीं?”

“हाँ, इसमें क्या बुराई है! अगर फाटक पर भूत होंगे तो जवाब देंगे, नहीं होंगे तो जवाब नहीं देंगे।” आशा को भी नन्हे की बात पसन्द आई।

दादा बोला, “तो आवाज दे ना। खड़ी-खड़ी मेरा मुँह क्या ताक रही है!”

“मैं...! मेरी आवाज तो भूतों के कान तक भी न पहुँचेंगी। बिरजू देगा आवाज। यह बड़ी जोर की हाँक लगाता है।” आशा साफ कन्नी काट गई।

भूतों को दूर से आवाज देने में बिरजू को कोई बुराई दिखाई न दी। वह जोर से चिल्लाया, “भूतो, भूतों, क्या तुम फाटक पर हो?”

बिरजू की आवाज वातावरण में गूँज कर रह गई। उसकी पुकार का कोई उत्तर न मिला।

वह दुबारा पूरा जोर लगाकर चिल्लाया, “भूतो! भूतो! जवाब दो। तुम फाटक पर हो या नहीं?”

जवाब इस बार भी नदारद था। बस, बिरजू की आवाज खण्डहर में गूँजकर रह गई।

“लो, बेकार ही डर रहे थे। फाटक पर कोई भूत नहीं है।” नन्हे ने उछलकर कहा।

“हाँ दादा, अब शुभ-आरम्भ करो। फाटक पर कोई भूत-वूत नहीं है,” आशा ने फिर फूँक भरी।

लेकिन दादा में अब अकेले फाटक खोलने का साहस नहीं रह गया था। उसने बिरजू की ओर देखा। पर बिरजू भी अकेले फाटक

खोलने जाने के लिए तैयार न था। उसने मुँह फेर लिया।

पाँचों में से कोई भी भूतिया हवेली का फाटक खोलने को तैयार न था। फाटक सबको जिन्दा मौत दिखाई दे रही थी। बिरजू ने आवाज लगाकर मालूम तो कर लिया था कि फाटक पर भूत पहरा नहीं दे रहे थे लेकिन किसी के भी मन का सन्देह अभी पूरी तरह मिटा नहीं था। ऐसा भी हो सकता था कि भूतों ने बिरजू की आवाज का जवाब न दिया हो पर वे जैसे ही फाटक के हाथ लगायें, भूत फौरन उन्हें गड़प कर जाएँ।

अन्त में मुन्नी ने एक सरल तरकीब सुझाई, “देखो, अकेला तो कोई फाटक खोलने के लिए तैयार नहीं होगा। सब साथ-साथ चलें तो कैसा रहे?”

“हाँ, यह ठीक है।” दादा को जैसे किसी ने डूबते से बचा लिया, “सब फाटक पर एक साथ धक्का मारेंगे।”

पाँचों नन्हे वीरों ने फाटक पर पहुँच कर एक साथ धक्का लगाया। लेकिन विशाल फाटक टस-से-मस न हुआ।

“यह तो हिलता भी नहीं,” आशा ने दादा की ओर देखकर कहा।

“अब की बार सब एक साथ पूरा जोर लगाना,” बिरजू ने अपनी कमीज की बाँह ऊपर को चढ़ाकर जोश से कहा।

एक बार फिर पूरा जोर लगाया गया। पर भला फाटक कहीं हिलने वाला था!

दादा का हाथ अपनी ठोड़ी पर पहुँच गया। हवेली के अन्दर कैसे घुसा जाय यह एक बड़ी भारी समस्या थी। पाँचों दिमाग गहरे सोच में डूब गए।

बिरजू सोचते-सोचते टहलने लगा। उसका दिमाग फिरकनी की

तरह चक्कर खा रहा था। बच्चों की दुनिया बसाने के लिए हवेली में पहुँचना सबसे जरूरी था, पर कोई उपाय ही न सूझ पड़ रहा था।

आशा बोली, “शायद भूतों ने अन्दर से संकल लगा रखी है।”

“गरे, तुने जब से अब तक यही सोचा है। इसे तो मैं नहीं समझ गया था, जब श्रमका लगाने से भी फाटक नहीं खुला था।” नन्हे ने आशा की बुद्धि पर तरस खाते हुए कहा।

दादा को अब तक सोचते-सोचते काफी समय हो गया था। ईम लिए उसने जल्दी-जल्दी सिर खुजलाना शुरू कर दिया था। जब किसी कठिन समस्या का हल उसे नहीं मिल पाता था तो वह सिर ही खुजलाने लगता था।

मुन्नी बोली, “कोई ऐसी तरकीब नहीं हो सकती जो हम बिना फाटक खोले ही हवेली के अन्दर चले जाएँ?”

मुन्नी की बात सुनते ही दादा का सिर खुजलाना बन्द हो गया। वह उछलकर बोला, “हो क्यों नहीं सकती? हवेली की चारदीवारी कहीं से तो इतनी नीची होगी, जिसे हम आराम से पार करके अन्दर पहुँच सकें।”

दादा ने इस समय पते की बात कही थी। इस तरकीब पर बिरजू भी खुशी से नाच उठा। उसे याद आया कि एक बार जब वह हवेली के चारों ओर चक्कर लगा रहा था, तो उसने एक ओर की दीवार गिरी हुई देखी थी। भूतों की खण्डहर हवेली की इस समय वह सब से नीची दीवार थी। उसने सीना फुलाकर कहा, “चलो, मैं सबको हवेली के अन्दर ले चलता हूँ।”

पाँचों बच्चे धूमकर हवेली की बायीं ओर बढ़ने लगे। सबसे आगे बिरजू रास्ता दिखाता हुआ चल रहा था। चलते-चलते सब उस जगह पहुँचे, जहाँ से हवेली की चारदीवारी कुछ बड़ गई थी।

“यह देखो, इस दीवार को लाँचकर अन्दर जाया जा सकता है,” बिरजू ने गिरी हुई दीवार की ओर इशारा करके गर्व से कहा।

दादा ने मन-ही-मन गिरी हुई दीवार की ऊँचाई नापकर कहा, “तो पहले तू ही दीवार लाँच ना।”

अब तो बिरजू सिटपिटाया। असल में वह दीवार हवेली की सब दीवारों में सबसे नीची तो थी लेकिन तब भी इतनी नीची न थी जिसे आसानी से पार किया जा सके।

बिरजू जल्दी-जल्दी उस सात फुट ऊँची दीवार को लाँचने की तरकीब सोचने लगा। उसे आस-पास कोई ऐसी चीज भी दिखाई न पड़ रही थी जिसका सहारा लेकर चारदीवारी पर चढ़ा जा सकता। जितना ही वह सोचता समस्या उतनी ही उलझती जाती थी। अन्त में जब कोई रास्ता नहीं दिखाई दिया तो उसने कुढ़कर कहा, “भाई, सबसे नीची दीवार तो मैंने दिखा दी। अब इस पर चढ़कर उस पार जाने की तुम सोचो।”

“यह तो वहीं-के-वहीं रहे!” आशा ने खीजकर कहा, “जो मुसीबत फाटक पर थी, वही यहाँ पर है!”

दादा का हाथ फिर ठोड़ी को ओर बढ़ना शुरू हुआ। पर अभी उसका हाथ ठोड़ी तक पहुँच भी न पाया था कि नन्हे एकदम उछलकर बोला, “बस, इतनी-सी बात तुममें से किसी की समस्या में नहीं आई। चारदीवारी पर चढ़ना तो बायें हाथ का खेल है।”

“भला कैसे?” मुन्नी ने मुँह बिचका कर कहा।

“मोहन दादा, तुम मुर्गा बन जाओ,” नन्हे ने तरकीब बताते हुए रौब से हुकम दिया।

टोली का सबसे छोटा सदस्य टोली के सरदार को मुर्गा बनने का हुकम दे, यह बात कुछ अजीब-सी थी। दादा ने अचकवाकर नन्हे

की ओर ताका।

नन्हे ने उसी लहजे में फिर कहा, “ओहो! देरी नहीं दादा, तुम्हारे ऊपर फिर आशा मुर्गा बनेगी, फिर बिरजू और फिर मुन्नी। सब से बाद में तुम सबके ऊपर चढ़कर मैं दीवार पर चढ़ जाऊँगा।”

सारी योजना सुनकर दादा को हँसी आ गई। वास्तव में हवेली की चारदीवारी के ऊपर चढ़ने के लिए इसके अलावा कोई तरकीब नहीं हो सकती थी।

आशा शाबाशी देती हुई बोली, “नन्हे, कभी-कभी तो तू बड़े पते की बात कहता है।

“बस, कभी-कभी ही!” नन्हे ने इस मूड में कहा मानो, किसी ने उसे आसमान पर से गिरा दिया हो। उसे पक्का विश्वास था कि वह हमेशा ही पते की बात कहता है।



योजना के अनुसार सबसे पहले मोहन दादा मुर्गा बना। उसके ऊपर आशा और फिर बिरजू और मुन्नी दोनों के ऊपर मुर्गा बन गए। जब चार मुर्गे एक दूसरे की पीठ पर चढ़ गए तो नन्हे सब मुर्गों पर पैर रखकर सीढ़ी की तरह सबसे ऊपर वाले मुर्गे की पीठ पर जा चढ़ा। वहाँ से हवेली की दीवार केवल एक फुट ही दूर रह जाती थी। नन्हे ने दोनों हाथों से दीवार पकड़ ली और उछलकर उस पर चढ़ गया।

जब तक नन्हे दीवार पर चढ़ा तब तक आशा की टाँगें जवाब दे गई। उधर दादा का तो बुरा हाल था। बोझ के कारण उसको कमर दुखी जा रही थी। वह नीचे से ही चिल्लाया, “मुन्नी, तू उधरकर चढ़ना। मैं बोझ के मारे मरा जा रहा हूँ।”

पर जब तक उसकी आवाज मुन्नी के कानों तक पहुँची, मुन्नी खड़े होकर अपने हाथ नन्हे के हाथों में पकड़ा चुकी थी।

उधर तो मुन्नी की दीवार पर चढ़ाने के लिए नन्हे ने उसे ऊपर खींचा और उधर धड़ाम से तीन मुर्गे धूल चाटने लगे। बिरजू उछल कर दूर जा गिरा।

नन्हे ऊपर से चिल्लाया, “बाप रे! मर गया! मुन्नी को पकड़ो



मन एक दूसरे की पीठ पर मुँगे उन गए

नहीं तो मैं भी गिरा !”

मुन्नी इस समय नन्हे के हाथों में अधर लटकी हुई थी। दादा ने भटपट उठकर मुन्नी के पैरों को सहारा दिया। मुन्नी गिरते-गिरते बची। कुछ देर में बिरजू और आशा भी धूल झाड़ते उठ खड़े हुए। आशा के तो कोई चोट न लगी थी—हाँ, बिरजू का घुटना ज़रूर छिल गया था।

बिरजू ने गुस्से में भरकर दादा से कहा, “अगर इतना बोझ नहीं सँभाल सकते थे, तो पहले ही क्यों नहीं बता दिया था ? मेरे घुटने तो न छिलते।”

दादा इस समय मुन्नी के पैरों को पकड़े हवेली की चारदीवारी से सटा खड़ा था। उसने बिरजू की बात पर ध्यान न देकर कहा, “चल, जल्दी से मुर्गा बन नहीं तो मुन्नी भी ज़मीन पर दिखाई देगी।”

पर बिरजू इस समय ताब खाए हुए था। उसने फिर गुस्से से कहा, “मुन्नी जाए भाड़ में ! मेरे घुटने का क्या होगा ?”

आशा ने बिरजू का घुटना देखकर कहा, “इतनी तो चोट भी नहीं लगी है जितना तू गर्म हो रहा है। वस, मामूली-सा छिल गया है।”

“हाँ, मामूली-सा छिल गया है ! तेरे लगे तो नानी याद आ जाए। आसमान मिर पर उठा ले। दूसरों को बातें बनाती है !” बिरजू ने गरजकर कहा। उसे चोट का कोई दुःख नहीं था। दुःख तो इस बात का था कि किसी भी साथी ने उसके साथ सहानुभूति नहीं दिखाई।

उधर मुन्नी को अपनी विन्ता सता रही थी। उसे डर था कि कहीं नन्हे उसके हाथ न छोड़ दे और वह ज़मीन पर गढ़ा न खा जाए। उसने बहुत ही नम्र शब्दों में कहा, “बिरजू भैया, चोट तो सचमुच तुम्हारे बहुत लगी है पर अगर तुम इस समय मुर्गा नहीं बनोगे तो मेरे

भी इतनी ही चोट लग जाएगी; और फिर मैं तो तुमसे छोटी हूँ।”

मुन्नी की नम्रता नीके पर काम कर गई। बिरजू पिघल गया। उधर चारदीवारी पर चढ़े नन्हे ने आखिरी बार चेतावनी दी, “मेरे हाथ से तो मुन्नी छुटी !” वास्तव में इतनी देर से मुन्नी को पकड़े-पकड़े नन्हे थक गया था और अब वह उसके हाथ से छुटने ही वाली थी।

नन्हे की चेतावनी सुनकर बिरजू अपनी चोट को भूल गया। वह भटपट भूतिया-हवेली की चारदीवारी से लगकर मुर्गा बन गया। दादा सावधानी से मुन्नी के दोनों पैर पकड़े-पकड़े ही मुँगे की पीठ पर चढ़ गया। इस प्रकार मुन्नी कुछ ऊँची उठ गई। नन्हे ने भी कुछ जोर लगाया और मुन्नी अपना घुटना चारदीवारी पर टेककर उस पर चढ़ गई।

अब टोली के दो सदस्य तो भूतिया-हवेली की चारदीवारी पर चढ़ चुके थे और तीन नीचे खड़े थे। मुर्गा बनने का खेल एक बार फिर खेला गया। इस बार पहले दादा और फिर बिरजू मुर्गा बना। आशा दोनों की पीठ पर चढ़ गई। मुन्नी और नन्हे ने उसको ऊपर खींच लिया। इसके बाद ऊपर वाला मुर्गा सीधा खड़ा हो गया और उसे भी पहले की तरह ही ऊपर खींच लिया गया।

अब नीचे रह गया मोहन दादा और टाट के दो थैलों में भरा सामान। दादा को ऊपर चढ़ाना एक अजीब मुरीबत थी। अपने दोनों



मुन्नी को डर था कि कहीं नन्हे उसके हाथ न छोड़ दे।

हाथ ऊपर करके सीधा खड़े होने पर भी उसका हाथ ऊपर वालों के हाथ तक नहीं पहुँच पाता था। दोनों ओर से काफी कोशिश करके देखी गई परन्तु दोनों के हाथों में थोड़ा-सा अन्तर बराबर बना रहा।

हारकर नन्हे बोला, “अब तो मजबूरी है दादा, तुम लौटकर घर ही चले जाओ। हम चारों ही बच्चों की दुनिया बसा लेंगे।”

सुनते ही मोहन दादा के होश फाँटा हो गए। बिरजू ने नन्हे की तरफ आँखें तरेरी। आशा तो गुस्से से बेकाबू हो गई, “तुम्हें न छोड़ जाएँ ! तेरे बिना भी तो बच्चों की दुनिया बस सकती है।”

नन्हे ने सफाई दी—“तो तुम्हीं बताओ उन्हें ऊपर चढ़ाया कैसे जाए ?”

“तो ऐसा कह ना। तूने तो एकदम सबों पर घड़ों पानी उलट दिया था,” मुन्नी ने कुछ समझाते हुए कहा। अन्त में बिरजू को एक उपाय सूझा। उसने कहा, “दादा, जरा ये दोनों थैले तो पकड़ाना।”

“तो क्या तुम सब मुझे छोड़कर जा रहे हो ?” दादा ने कुछ रूआँसा होकर पूछा। थैले माँगने का साफ मतलब था कि बिरजू ने उसे इसी हालत में छोड़कर हवेली के अन्दर जाने का निश्चय कर लिया था।

आशा ने बिरजू के मुँह की ओर देखा। टोली के सरदार को छोड़कर हवेली के अन्दर जाने के लिए वह बिल्कुल तैयार न थी। बिरजू ने उत्तर दिया, “दादा, ऐसा कभी हो सकता है कि हम तुम्हें छोड़कर चले जाएँ ? थैले तो तुम्हें ऊपर पहुँचाने के लिए ही माँग रहा हूँ। तुम थैले को कसकर पकड़कर खड़े हो जाओ। हम थैले के साथ-साथ तुम्हें भी ऊपर खींच लेंगे।”

दादा को जैसे कहीं से गढ़ा हुआ खजाना मिल गया। उसने एक टाट का थैला उठाया और उसे कसकर पकड़ अपने दोनों हाथ ऊपर कर लिए। बिरजू ने थैला पकड़कर खींचा। दादा ने उसे और कस

कर पकड़ लिया। बिरजू ऊपर से चिल्लाया, “अरे दादा, इस थैले को तो कम-से-कम छोड़ दो। तुम्हें हम दूसरे थैले के साथ खींचेंगे। अगर तुम्हें भी इसी थैले के साथ खींच लिया तो दूसरा थैला ऊपर कैसे आयेगा?”

“अरे,” कहकर दादा ने थैला छोड़ दिया। ऊपर खड़े आशा, मुन्नी और नन्हे मन-ही-मन दादा के इस उतावलेपन का मजा ले रहे थे।

थैला पकड़कर बिरजू ने उसे हवेली की चारदीवारी के ऊपर रख दिया। दादा ने नीचे से दूसरा थैला उठा लिया और हाथ ऊपर को उठा दिए। बिरजू बोला, “हाँ तो, मोहन दादा, थैला कसकर पकड़े रहना। मैं जोर लगाता हूँ। नन्हे, तू भी मेरे साथ थैला खींच।”

दादा ने थैले के दो छोर पकड़कर कसकर मुट्ठी भींच ली। बिरजू और नन्हे ने थैला ऊपर को उठाना शुरू किया। पर दादा को चारदीवारी पर चढ़ाना इतना आसान काम न था, जितना उन्होंने समझ रखा था। नन्हे और बिरजू दोनों के जोर लगाने से भी दादा न हिले। दोनों ने एक बार फिर कोशिश की। इस बार मुन्नी ने भी जोर लगाया। दादा कुछ ऊपर को उठा। बिरजू का साहस दुगुना हो गया। तीनों ने दम साधकर एक बार फिर झटका दिया। झटके के साथ दादा एकदम एक फुट ऊँचा उठ गया। आशा इसी मौके की इन्तजार में बैठी थी। उसने झपटकर दादा की एक बाँह पकड़ ली। बिरजू ने भी थैला छोड़कर दादा की दूसरी बाँह पकड़ ली।

अब तो दादा को ऊपर खींचना कोई कठिन काम नहीं रह गया था। चारों ने मिलकर टोली के सरदार को हवेली की दीवार पर खींच लिया।

अब तक बच्चा-पार्टी के पाँचों नन्हे वीर अपने साथियों को ऊपर

चढ़ाने में लगे हुए थे। इसलिए उनमें से किसी को भी चारदीवारी की दूसरी ओर देखने का मौका न मिला था। पर अब दादा के ऊपर चढ़ते ही सबका ध्यान दूसरी ओर खिंच गया।

नन्हे चिल्लाया, “बाप रे, यह तो काल कोठरी है, काल कोठरी!” उस दीवार पर से हवेली का जितना हिस्सा दिखाई देता था, वह अधिकतर छतों और दीवारों से घिरा हुआ था। इसलिए उस तरफ आधे से ज्यादा हिस्से में अन्धकार छाया हुआ था। सामने बस पुराने ढंग के बने कमरे और दालान ही दिखाई पड़ रहे थे।

मुन्नी उन्हें देखकर बोली, “दया रे, ये तो सब कमरे ही कमरे हैं। मैं तो सोच रही थी अन्दर एक सफाचट मैदान होगा।”

आशा ने आश्चर्य से कहा, “और भूत तो यहाँ एक भी दिखाई नहीं देता।”

बिरजू ने आशा की बुद्धि पर तरस खाया, “भूत उजाले में दिखाई नहीं देते। यह अंधेरा जो हो रहा है, यहाँ पर होंगे भूत। जरा टार्च तो दे, नन्हे।”

नन्हे ने अपने बराबर रखे थैले से टार्च निकाली और बिरजू के हाथ में पकड़ा दी। बिरजू ने उसे जलाकर उसकी गोल रोशनी भूतिया हवेली के अन्दर घुमाना शुरू की। हवेली के कमरे और दालान सब खाली पड़े थे। वर्षा और धूप के कारण कमरों की दीवारें कहीं-कहीं से चटक गई थीं। कहीं-कहीं से दीवारें टूट-फूट भी गई थीं। एक कमरे का तो दरवाजा ही गिर पड़ा था। कमरों के बाहर कच्ची जगह में बहुत ऊँची-ऊँची घास उग आई थी।

जब बिरजू ने एक बार टार्च का चक्कर पूरा कर लिया तो नन्हे ने उत्सुकता से पूछा, “भूत दिखाई दिए?”

“मुझे तो नहीं देखे!” बिरजू कुछ हताश होकर बोला। उसे पूरी

आशा थी कि अंधेरे में भूत जरूर दिखाई देंगे।

दादा ने कहा, “अब नीचे उतरना है या यहीं खड़े ब्याली पुलाव बनाते रहेंगे? नीचे उतरकर अपने-आपे मालूम चल जाएगा कि भूत कहाँ हैं।”

चारों जैसे सोते से जाग गए। बिरजू बोला, “तो उतरो!”

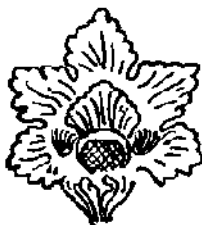
“तो उतरो! जैसे उतरना भी मक्खी मारने के बराबर है!” दादा ने बिरजू की नकल करके उसे चिढ़ाया।

बिरजू खिसिया गया। उससे कुछ उत्तर न देते बना। बाकी तीनों बच्चे भी एक-दूसरे का मुँह तकने लगे।

दादा फिर रौब से बोला, “आओ, मेरे पीछे-पीछे आओ।” और वह दीवार पर आगे की ओर चलने लगा। सामान उठाकर बाकी चारों बच्चे भी उसके पीछे चलने लगे।

चलते-चलते दादा अचानक रुक गया और रौब से बोला, “यहाँ से उतरो नीचे!”

“यहाँ से!” आश्चर्य से बिरजू ने नीचे की ओर देखा। अब वे पहले से भी ऊँची चारदीवारी पर खड़े थे। लेकिन नीचे देखते ही बात उसकी समझ में आ गई। उस दीवार में कई जगह से ईंटें निकली हुई थीं, जिनसे दीवार में कई जगह थोड़ी-थोड़ी दूर पर सुराख हो गए थे। इन सुराखों में पैर रखकर आराम से नीचे उतरा जा सकता था।



दीवार में बने सुराखों में पैर रखकर बच्चा-पार्टी के पाँचों साहसी वीर भूतिया हवेली के अन्दर उतर गए। जिस जगह वे सब उतरे थे, वहाँ की जमीन कच्ची थी और उसमें लम्बी-लम्बी घास उग आई थी।

दादा ने कुछ रौब के साथ कहा, “देखो, अब हम भूतिया हवेली के अन्दर आ गए हैं। यहाँ पर हमें बच्चों की नयी दुनिया बसाना है। अब आगे बढ़ने से पहले यह सोच लेना चाहिए कि हमें आगे क्या करना है।”

“तो जल्दी से सोचो।” नन्हे ने अपने पैरों को जल्दी-जल्दी खुजलाते हुए कहा। घास के अन्दर छिपे बरसाती मच्छरों ने उसके पैरों में काटना शुरू कर दिया था।

“इसमें सोचना ही क्या है? हवेली में तो हम आ ही गए हैं। अब इसमें रहने के लिए अच्छे से पाँच कमरे ढूँढ लो।” आशा ने अपनी बुद्धि दिखाई।

“वाह-वाह, क्या कहने हैं! जैसे हर कमरा हमारे लिए ही खाली कराया गया है। भूतों ने एक बार भी आँख दिखा दी, तो घर पहुँचकर ही साँस आयेगा!” बिरजू ने आशा की ओर मुँह बिगया।

अब तक मच्छरों ने मुन्नी की टांगों से भी छेड़-छाड़ शुरू कर दी थी। उसने अपनी टांगों को जोर-जोर से सहलाते हुए पूछा, “क्यों दादा, घास से बाहर निकलकर नहीं सोचा जा सकता है?”

“देख मुन्नी, जब काम की बातें हो रही हों, तब तू बेकार का अड़ंगा मत लगाया कर। यहाँ कोई तुझे खाए जा रहा है?” मोहन दादा ने धूरकर मुन्नी की ओर देखा। पर अभी घास में से मुँह निकालकर एक बरसाती मच्छर ने दादा के पैरों में डंक मारा। दादा तिलमिला उठा।

इधर आशा और बिरजू पर भी मच्छर अपनी कृपा करने से बाज नहीं आए। दोनों के पैरों में हजारों मच्छर बुरी तरह चिपट गए। आशा बरामदे की ओर दौड़ती हुई बोली, “दादा, यह तो मच्छर ही मच्छर हैं! सामने बरामदे में आ जाओ।”

अब तक मच्छरों ने दादा को बुरी तरह से घेर लिया था। वह भी आशा के पीछे बरामदे की ओर भागा। बिरजू, नन्हे और मुन्नी भला मच्छर-सेना के सामने कहाँ टिक सकते थे! उन्होंने भी बरामदे में जा कर ही दम लिया।

“ओफो! बड़े मच्छर हैं।” मोहन दादा ने अपनी टांग से चिपके बरसाती मच्छरों को झाड़ते हुए कहा।

“और मैं पहले जो कह रही थी कि घास से बाहर निकलकर सोच लो,” मुन्नी के मन में दवा क्रोध फूट पड़ा।

दादा ऐसे मौकों पर चुप रहना अधिक अच्छा समझता था। उस ने मुन्नी की बात का कोई उत्तर नहीं दिया।

बिरजू ने फिर मतलब की बातों पर आते हुए कहा, “हाँ तो, अब क्या करने का इरादा है?”

“देखो बिरजू, यह हवेली है भूतों की। भूतों से मित्रता करके ही

हम यहाँ भूतों की हवेली बसा सकते हैं। सबसे पहले हमें भूतों से मित्रता करनी है,” दादा ने बड़ी समझदारी से अपनी बात को टोली के सदस्यों के सामने रखा।

“नहीं दादा, सबसे पहले तुम सबको मेरे और बिरजू के सोने का इन्तजाम करना है। हम दोनों रात-भर के जगे हुए हैं,” नन्हे ने आँखें मलते हुए कहा। रात की नींद अब उसे सताने लगी थी।

मुन्नी तुनककर बोली, “इसे हर समय अपनी ही पड़ी रहती है। जब देखो अपने ही आराम की सोचता है।”

“और तू कौन-सा दूसरों के आराम की सोचती है! रात-भर जागना पड़ता तो नानी याद आ जाती,” बिरजू ने चिढ़कर कहा। सोने का नाम सुनकर उसकी आँखों में भी नींद भर आई थी। आशा ने कुछ सोचकर कहा, “बिरजू, सोने का इन्तजाम भी तो तभी होगा, जब भूतों से मित्रता हो जायेगी। जब भूत हमारे मित्र बन जायेंगे, तो वे हमें रहने के लिए एक आलीशान कमरा देंगे, जिसमें बहुत सारा सामान होगा। बहुत सारी मेजें, बहुत सारी कुर्सियाँ, एक गुदगुदा बिस्तरा—”

“और मेरो गुड़िया के लिए भी तो एक छोटा-सा पलंग होगा ना?” मुन्नी ने उछलकर पूछा। उसे सबसे ज्यादा अपनी गुड़िया की चिन्ता थी।

“नहीं भी होगा तो भूतों से माँग लेंगे। अपने मित्रों के लिए क्या वे इतना भी नहीं करेंगे?” आशा ने मुन्नी को धीरज बंधाया।

“और मेरे गुड्डे के लिए?” नन्हे भी पीछे रहने वाला नहीं था।

“उस टेढ़ी-मेढ़ी टांग वाले के लिए पलंग की जरूरत नहीं है, आशा!” मुन्नी ने मुँह बनाकर कहा।

“देख मुन्नी, मैं कितनी बार तुम्हसे कह चुका हूँ कि मेरे गुड्डे

को टेढ़ी-मेढ़ी टांगों वाला मत कहा कर। बस, यह आखिरी बार कह रहा हूँ। फिर कहा तो खैर मत समझना!” नन्हे ने ताव खाकर कहा।

बात बढ़ती देख बिरजू ने तुरन्त टोका, “अब इस गुड़िया-गुड्डों के किस्सों को छोड़ो भी! अब तो यह सोचो कि भूतों से मित्रता कैसे की जाए?”

“लेकिन भूत कहीं दिखाई दें, तभी तो उनसे मित्रता की जाए। यहाँ तो कोई भी दिखाई नहीं देता,” मोहन दादा ने खीझकर कहा।

“यहाँ खड़े-खड़े तो भूत दिखाई देने के नहीं। वे तो कमरों के अन्दर जाने पर ही मिलेंगे,” आशा ने भूत न मिलने का कारण बताया।

बात दादा की भी समझ में आ गई। वह बोला, “तो फिर भूतों को अन्दर चलकर ढूँढा जाए।”

“और क्या?” बिरजू ने अपनी सहमति जताई।

मुन्नी ने पूछा, “लेकिन चलना किधर से है?”

“सामने इतने सारे कमरे-ही-कमरे दिखाई पड़ रहे हैं, किसी एक से अन्दर चलो।” दादा ने बड़ी लापरवाही से कहा।

“तो चलो ना!” नन्हे को रह-रहकर नींद सता रही थी।

मोहन दादा एक कमरे की ओर बढ़ा। चारों उसके पीछे-पीछे चले। कमरे के दरवाजे पर पहुँचकर उसने दोनों हाथ से जोर लगा कर किवाड़ों को अन्दर को धकेल दिया। चीं-चीं-चीं की तेज आवाज करते हुए किवाड़ खुल गए।

आवाज सुनकर पाँचों चौंक पड़े। दादा ‘भूस्स’ कहकर उछला और किवाड़ों से दो गज दूर जा पड़ा। नन्हे सहमकर पास खड़ी काँपती आशा से लिपट गया। मुन्नी पीछे की भागी। बिरजू के दोनों पैर डर से थर-थर काँपने लगे। पाँचों सहमी निगाहों से



“अब इस गुड़िया-गुड्डों के किस्से को छोड़ो भी!...”

एकटक दरवाजे की ओर देख रहे थे कि भूत अब क्या करते हैं।

लेकिन जब बहुत-सा समय शान्ति से गुजर गया और भूतों ने कुछ भी न किया, तो पाँचों को थोड़ा-सा साहस बंधा। नन्हे आशा को छोड़कर अलग खड़ा हो गया। मुन्नी धीरे-धीरे वापस लौट आई। मोहन दादा भी जमीन पर से उठ खड़ा हुआ। बिरजू हलके से बुदबुदाया, “यहाँ तो कोई भूत दिखाई नहीं देता।”

“दिखाई तो मुझे भी नहीं देता, पर है जरूर।” दादा अब भी काँप रहा था।

“लेकिन जब भूत है तो दिखाई क्यों नहीं देता?” नन्हे ने दादा की ओर देखा।

“उजाले में भूत दिखाई ही कहाँ देता है!” उत्तर दादा ने न देकर मुन्नी ने दिया।

आशा शान्त खड़ी एकटक किवाड़ों की ओर देख रही थी, जहाँ से अभी-अभी थोड़ी देर पहले भूत बोला था।

बिरजू फिर बोला, “तो अब क्या करना है, दादा? भूत तो बस एक बार बोलकर चुप हो गए।”

“मेरी तो नेक सलाह है कि घर वापस लौट चलो। अब भी कुछ नहीं बिगाड़ा है।” जब दादा से कुछ उत्तर देते न बन पड़ा, तो नन्हे ने कहा।

मुन्नी ने भी सिर हिलाया, “हाँ, दादा, सुबह का भूला अगर शाम को घर वापस लौट आए तो भूला नहीं कहलाता। सब झंझट छोड़कर सीधी तरह घर की नापो।”

अब मोहन दादा क्या कहे? उसे कोई रास्ता ही नहीं सूझ पड़ रहा था।

तभी अचानक आशा जोर से खिलखिलाकर हँस पड़ी। चारों

आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगे।

“तुम्हें हँसी क्यों आ रही है, आशा?” मुन्ने ने मुँह बनाकर पूछा।

पर आशा की हँसी फिर भी न रुकी। वह जोर-जोर से हँसे ही चली जा रही थी। किसी की समझ में न आ रहा था कि आशा आखिर इतना क्यों हँस रही है!

बिरजू मोहन दादा के कान के पास मुँह ले जाकर बोला, “दादा, मेरे ख्याल में तो आशा पर भूत चढ़ गया है। इसे तो फौरन झड़पड़ बाबा के पास ले चलो। रामू चाचा के भूत चढ़ा था, तब भी झड़पड़ बाबा ने ही झाड़ा था।”

अब जाकर कहीं आशा की हँसी रुकने पर आई। उसने पेट पकड़कर हाँफते हुए कहा, “मेरे भूत-प्रेत कोई नहीं चढ़ा है। मुझे तुम्हारी अबल पर हँसी आ रही है। जिसे तुम सब भूत की आवाज समझ रहे थे, वह तो एक चटकनी की आवाज थी। दादा के किवाड़ खोलने पर किवाड़ की चटकनी फर्श से रगड़ गई थी।”

“घत्तरे की!” मुन्नी ने उछलकर कहा, “लो बोलो, इतनी-सी बात हमारी समझ में नहीं आई।”

वास्तव में कमरे के किवाड़ों में लगी चटकनी ढीली थी और वह जमीन पर टिकी हुई थी।

“अब अन्दर चलना है या नहीं। अब तो भूत भी चटकनी बन गया!” दादा ने हँसकर कहा और कमरे के अन्दर घुस गया। उसके पीछे-पीछे टोली के अन्य चारों सदस्य भी अन्दर घुस गए। सबसे अन्त में आशा अन्दर घुसी।

आशा के कमरे में घुसते ही आँधी का एक भौंका आया और कमरे के किवाड़ अपने-आप बन्द हो गए। कमरे में घुप्प अंधेरा छा गया।

बच्चा-पाटी के पाँचों धीरे एक बार फिर सहम गए। नन्हे और मुन्नी डरकर आपस में लिपट गए। बिरजू, मोहन दादा और आशा भी थरथर काँपने लगे। अचानक अपने-आप कमरे के किवाड़ कैसे बन्द हो गए, यह किसी की भी समझ में न आया।

बिरजू काँपता हुआ बोला, “नन्हे, जरा टार्च तो दे। यहाँ तो हाथ को हाथ सुभाई नहीं देता।”

“देता है,” कहकर नन्हे अपनी जेब टटोलने लगा।

टार्च मिलने में देरी होते देख बिरजू फिर बोला, “नन्हे, तू डर तो नहीं रहा? डरना मत। भूतों से डरना नहीं चाहिए।”

“कौन कहता है कि मैं डर रहा हूँ!” नन्हे ने जोश में भरकर कहा और मुन्नी से अलग होकर जेब में से टार्च निकालकर बिरजू के हाथ में पकड़ा दी।

लेकिन जब वह बिरजू के हाथ में टार्च रख रहा था, तो उसका हाथ बिरजू के हाथ से छू गया। बिरजू का हाथ बुरी तरह काँप रहा था। नन्हे बोला, “तेरा तो हाथ काँप रहा है, बिरजू।”

“कौन कहता है? मुझे तो कभी डर लगता ही नहीं। और फिर भूतों से भी क्या डरना! उनसे तो हम दोस्ती करेंगे, दोस्ती! क्यों दादा, ठीक है ना?” कहकर बिरजू ने टार्च जला दी।

“जल्दी से पहले ये किवाड़ खोल। अंधेरे में तो कुछ सुभाई ही नहीं देता।” मोहन दादा ने अपनी बबराहट छिपाकर कहा। डर के मारे उसका बुरा हाल हो रहा था। अंधेरे में उसे हजारों भूतों की छायाएँ घूमती दिखाई दे रही थीं।

“हाँ-हाँ, मैं सबसे पहले किवाड़ों का ही इन्तजाम करता हूँ,” कह कर बिरजू किवाड़ों के पास पहुँचा और उन्हें खोलने के लिए उन पर एक जोर का धक्का मारा। पर किवाड़ उस से मस न हुए।

“दादा, ये किवाड़ तो खुलते ही नहीं,” बिरजू चिल्लाया।

“तेरे में कुछ दम हो तो किवाड़ खुलें भी!” कहकर मोहन दादा आगे आए और उन्होंने भी किवाड़ों को एक धक्का दिया।

पर किवाड़ न खुले।





जब बहुत कोशिश करने पर भी कमरे के किवाड़ न खुले तो बच्चा-पार्टी के पाँचों नन्हे वीर धबराए। कमरे में घुसते ही कमरे के किवाड़ों का अपने-आप बन्द हो जाना और फिर बहुत कोशिश करने पर भी न खुलना एक जादू का खेल-सा था।

बिरजू बोला, “दादा, यह तो बिल्कुल ऐसा ही हुआ जैसा राजा चन्द्रसेन के तिलस्मी में घुस जाने पर हुआ था। उसके तिलस्मी में घुसते ही सारे कमरों के दरवाजे आप-से-आप बन्द हो गए थे।” बिरजू ने एक तिलस्मी किताब पढ़ी थी। उसकी कहानी इस समय उसे याद आ रही थी।

आशा कुछ सोचकर बोली, “मेरा ख्याल है कि भूतों को हमारे हवेली में घुसने का पता पड़ गया है। उन्होंने ही हमें इस कमरे में कैद किया है।”

“हाँ आशा, मेरा भी यही ख्याल है। किसी भूत ने हमें चार-दीवारी पर चढ़ते हुए देख लिया होगा। उसने यह खबर अपने राजा को सुनाई होगी। राजा ने हमें कैद करने का हुक्म दिया होगा। तभी तो उस भूत ने हमें इस कमरे में कैद किया, “मुन्नी ने अपनी बुद्धि पर जोर देकर एक कहानी गढ़ दी।

“लेकिन अब तो घर लौटने का रास्ता भी बन्द हो गया,” नन्हे

ने असली समस्या की ग़ौर इशारा किया। अंधेरे में ही वह बिरजू को घूर-घूरकर देख रहा था, जिसने उन सबको इस मुसीबत में फँसा दिया था। उसका वेश चलता तो इस समय बिरजू की चटनी बनाकर ही छोड़ता।

पर मोहन दादा को सबसे अधिक गुस्सा आशा पर आ रहा था। वह सारे फ़साद की जड़ आशा को ही समझे बैठा था। उसके विचार में आशा ने ही भूत को किवाड़ की चटकनी बताकर उन्हें यहाँ कैद करा दिया था। वह क्रोध से फुँकारता हुआ बोला, “इस कमरे में कैद तो करा दिया, अब यहाँ से निकलने का भी तो रास्ता बताओ, आशा जी। जिसे तुम चटकनी की आवाज बता रही थीं, वह भूत की आवाज थी, भूत की! हमारे अन्दर आते ही उसने हमें कैद कर लिया ना?”

“देखो, मोहन दादा, तुम मुझ पर भूठ-भूठ इल्जाम मत लगाओ। तुम्हें कैद मैंने नहीं कराया है। मैंने तो जो सच बात थी, वही कही थी। मैं अब भी शर्त लगाकर कह सकती हूँ कि वह आवाज भूत की नहीं थी। वह तो चटकनी की फर्श से रगड़ा खाने की आवाज थी,” आशा ने भी एक की दो सुनाई। वह दादा का रीब जरा कम मानती थी।

“तो इसका मतलब यह है कि मैंने ही तुम सबको कैद करा दिया है,” मोहन दादा ने खीजकर कहा।

“यह कौन कहता है? तुम तो नाहक ताव खा रहे हो,” आशा अब भी चुप न रह सकी।

बिरजू ने इस शक्-युद्ध को बन्द करने की कोशिश की, “अच्छा अब ये गरमागरमी की बातें बन्द करोगे या नहीं? अरे भई, अब तो यह सोचो कि इस काल-कोठरी से हटकारा कैसे मिले? या यहीं पड़े-पड़े सड़ना है?”

“कोई रास्ता हो तभी तो बाहर निकला जाए। बाहर कहाँ से निकलें, तेरे सिर से?” दादा ने बचा हुआ सारा क्रोध बिरजू पर उड़ेल दिया।

तभी नन्हे बोला, “आशा जरा टार्च तो देना।” उसके मन में एक बहुत बढ़िया विचार सूझा था।

आशा ने टार्च नन्हे को पकड़ा दी। नन्हे ने टार्च लेकर जला दी और कमरे की दूसरी ओर रोशनी फेंकने लगा। घूमते-घूमते एक स्थान पर जाकर टार्च की गोल रोशनी रुक गई। सचमुच नन्हे ने जो बात सोची थी, वही निकली। नन्हे की टार्च की रोशनी इस समय जहाँ पर पड़ रही थी, वह एक दरवाजा था। नन्हे खुशी से उछल पड़ा। उसने सोचा था कि इतने बड़े कमरे में केवल एक ही दरवाजा नहीं हो सकता। कहीं-न-कहीं पर एक दरवाजा और होगा, जो हमें अंधेरे के कारण दिखाई नहीं दे रहा है।

एक नया दरवाजा देखकर टोली के पाँचों सदस्यों में खुशी की लहर दौड़ गई। मोहन दादा आश्चर्य से बोला, “अरे, इस कमरे में तो एक दरवाजा और भी है।”

“और क्या!” नन्हे ने गर्व से सीना फुलाया। बिरजू इस नये दरवाजे को खोलने के लिए आगे बढ़ा।

मुन्नी ने टोका, “कहीं भूतों ने इसमें भी ताला न लगा दिया हो।”

“पहले खोलने तो दे!” मोहन दादा ने आँखें तरेरकर मुन्नी की ओर देखा। इस शुभ मौके पर मुन्नी का रोड़ा अटकाना उसे बिल्कुल नहीं भाया। उसे इस समय इस बात की खुशी हो रही थी कि बिरजू खुद ही इस किवाड़ को खोलने के लिए तैयार है।

मोहन दादा की शहपाकर बिरजू में थोड़ा-सा जोश और बढ़ गया। उसने झपटकर दरवाजे में एक धक्का मारा। शीशम की लकड़ी

के किवाड़ चरमराकर खुल गए। बाहर से ताजी हवा का एक झोंका आया और कमरे में सूरज की रोशनी फैल गई।

“अरे, यह तो बाग है, बाग!” मुन्नी उछलकर बोली। दरवाजा खुलते ही उसकी निगाह फलों से लदे पेड़ों पर पड़ी। कमरे के बाहर जहाँ तक निगाह जाती थी फलों से लदे पेड़-ही-पेड़ दिखाई पड़ रहे थे।



धक्का मारते ही किवाड़ चरमराकर खुल गए

बाग का नाम सुनकर नन्हे उसे देखने के लिए झपटकर आगे आया। बिरजू अब तक कमरे से बाहर निकल चुका था। वह पेड़ों की ओर देखकर चिल्लाया, “वाप रे! यहाँ तो बहुत सारी लीचियाँ हैं!”

“लीचियाँ?” आशा उछलकर कमरे से बाहर भागी। लीचियाँ उसे बहुत अच्छी लगती थीं।

मोहन दादा भी यह देखने के लिए कि बाग में क्या-क्या है, कमरे से बाहर निकल आया। इस समय दिन काफी चढ़ आया था। सुबह से पाँचों पेटों में कुछ भी न पड़ा था, इसलिए ताजे और पके फलों को देखते ही पाँचों के पेटों में चूहे-बिल्ली का खेल शुरू हो गया।



आशा ने लीचियों का गुच्छा तोड़कर नन्हे की ओर फेंक दिया।

मुन्नी घूम-घूमकर बाग में अपनी पसन्द के फल छांटने लगी। बाग में लगभग सभी फलों के पेड़ थे। एक बढ़िया बम्बइया आम का पेड़ देखकर बिरजू उस पर चढ़ गया और लगा तोड़-तोड़कर खाने पके-पके आम। दादा को सबसे अधिक आइस पसन्द थे। वह आइस के पेड़ पर चढ़ बैठा। नन्हे दूर तक बाग में एक चक्कर लगाकर लौटा, तो उसने देखा कि आशा एक लीचियों के पेड़ पर टंगी है।

नन्हे को देखकर आशा ने आवाज लगाई, “ओ नन्हे, लीचियाँ खायेगा?” और लीचियों का एक गुच्छा तोड़कर उसने नन्हे की ओर फेंक दिया। नन्हे ने गुच्छा लपक लिया, लेकिन लीचियाँ नहीं खाईं।

तभी मुन्नी टहलती हुई उधर आ निकली। नन्हे को खड़ा देखकर उसने कहा, “नन्हे, मेरी तो यह समझ में नहीं आ रहा कि कौन-सा फल सबसे पहले खाऊँ!”

“और मेरी यह समझ में नहीं आ रहा कि कौन-कौन से फल खाऊँ! जी तो कर रहा है कि सभी फलों का स्वाद चखूँ, पर यहाँ तो इतने सारे फल हैं कि अगर मैंने हरेक तरह का एक-एक फल भी खाया तो मैं नन्हे के बजाय पेटू-मास्टर बन जाऊँगा। आई बात समझ में?” बजाय मुन्नी की समस्या सुलझाने के नन्हे ने अपनी कठिनई उसके सामने खोलकर रख दी।

“तो फिर क्या किया जाय?” मुन्नी ने भी मोहन दादा की तरह खोपड़ी खुजलाई।

“तुम दोनों तो मूर्ख हो! अरे, मेरी बात मानो, जो मन में आए बह छककर खाओ। हम यहाँ से कहीं भागे तो जा नहीं रहे। हमें तो यहीं पर बच्चों की नयी दुनिया बसानी है। खाओ और मौज मनाओ!” पेड़ पर चढ़ी आशा ने अपना मुँहावा रखा।

बात नन्हे और मुन्नी की समझ में बैठ गई। दोनों सोचने लगे— “अरे हाँ, हम यहाँ से घर तो वापस लौटेंगे ही नहीं। हमें तो सारी ज़िन्दगी यहीं रहना है। फिर जल्दी क्या है? धीरे-धीरे रोज नये-नये फलों का स्वाद चखेंगे।” और वे दोनों भी फलों पर टूट पड़े।



जब बम्बइया आम खाते-खाते बिरजू थक गया तो वह पेड़ पर से उतरकर बाग में अपने साथियों को खोजने चल दिया। इस समय उसकी आँखों में नींद भरी हुई थी। नींद की खुमारी में वह झूमता हुआ चल रहा था। अब तक तो उसका पेट खाली था, इसलिए रात की नींद उसे दूर भाग रही थी। लेकिन अब पेट भरते ही नींद उसे बुरी तरह सताने लगी थी।

तभी बिरजू को नाशपातियों के पेड़ पर मुन्नी चढ़ी हुई दिखाई दी। बिरजू ने वहीं से आवाज दी, “ओ मुन्नी, अभी नाशपातियों से पेट नहीं भरा?”

“तुम पेट भरने की बात कहते हो यहाँ तो पेट फटने के लिए तैयार है। बस, यह आखिरी समझो!” कहकर मुन्नी ने अन्तिम नाशपाती में दाँत गड़ा दिए।

इतने में मोहन दादा और आशा भी घूमते हुए वहाँ आ पहुँचे। दादा आते ही मखमल-सी हरी-हरी घास पर लेट गया। आशा बोली, “बिरजू, सचमुच यहाँ तो बड़ा आराम है। यहाँ न अम्मा का डर है, न बेटू मास्टर की बेंत का। बस, मौज ही मौज है!”

मुन्नी भी नाशपातियों का पीछा छोड़ नीचे उतर आई थी। उसने

तुरन्त कहा, “और सबसे मजेदार बात तो यह है कि अभी तक एक भी भूत नहीं दिखाई दिया।”

“जरा रात हो जाने दे। सारे भूत एक साथ दिखाई पड़ जाएंगे। क्या भूतों को देखने के लिए उतावली हो रही है!” कहकर मोहन दादा ने घास पर करवट बदली।

बिरजू भी लेटते हुए बोला, “दादा, मैं तो यहीं सोए जाता हूँ। बड़ी नींद आ रही है।”

“तू तो बड़ी जल्दी हिम्मत हार जाता है, बिरजू। नन्हे को देख, तुम्हसे छोटा है पर अभी तक हिम्मत नहीं हारी। वह भी तो तेरे साथ सारी रात जागा था।” दादा बोला। उसके मुँह से नन्हे की प्रशंसा सुनकर बच्चा-पार्टी का ध्यान नन्हे की ओर दौड़ गया। नन्हे वहाँ पर नहीं था।

“नन्हे कहाँ है?” आशा ने आश्चर्य से पूछा।

“होगा कहाँ! किसी पेड़ पर चढ़ा पेट-पूजा कर रहा होगा!” मुन्नी ने लापरवाही से कहा।

बिरजू बोला, “पेट तो उसका सबसे छोटा है और पेट-पूजा में उसे सबसे ज्यादा समय लगता है। माजरा क्या है?”

“कलजुग है भैया कलजुग! इसमें हर काम उल्टा होता है!” मुन्नी ने फिर वही बड़ी-बूढ़ियों वाली बात गढ़ी।

मोहन दादा अपने को टाली का सरदार समझता था, इसलिए टोली के सभी सदस्यों की देखभाल करना भी वह अपना कर्तव्य समझता था। नन्हे के अभी तक न आने के कारण उसे चिन्ता मताने लगी।

बिरजू बोला, “दादा, क्या सोच रहे हो?”

दादा एकदम चौंककर बोला, “मैं! मैं! मैं सोच रहा हूँ कि नन्हे अब तक आया क्यों नहीं! वह रह कहाँ गया?”

“रह कहीं नहीं गया। है इसी बाग में। बस, आता ही होगा।” मुन्नी ने हाथ नचा दिए। कुछ समय और बीत गया। नन्हे अब तक



नन्हे के आने से सब की चिन्ता बढ़ती जा रही थी भी नहीं आया था। जैसे-जैसे समय बीतता जाता था नन्हे के बारे में चिन्ता बढ़ती जा रही थी। अन्त में जब आधा घण्टा गुजर जाने पर भी नन्हे दिखाई नहीं पड़ा तो बिरजू बोला, “क्यों दादा, यह भी तो हो सकता है कि नन्हे हमें बाग में ढूँढता फिर रहा हो और हम उसे नहीं मिल पा रहे हों।”

“यानी तुम्हारा मतलब है कि नन्हे नहीं खोया बल्कि हम नन्हे के लिए खो गए,” आशा ने बात को सरल किया।

“हाँ, नहीं तो इतनी देरी का क्या काम था? अब तक तो नन्हे को हमारे पास आ ही जाना चाहिए था।” बिरजू ने पूरी सहमति दिखाई।

मुन्नी बोली, “तो फिर मुसीबत क्या है? हम चारों चार तरफ से अलग-अलग जाकर उसे ढूँढें। कहीं-न-कहीं तो वह मिल ही जायेगा।”

मोहन दादा अब तक तीनों की बातें बड़े ध्यान से सुन रहा था। वह जोर से बोला, “नहीं, नहीं, बिल्कुल नहीं! हम सब साथ-साथ ही नन्हे को ढूँढने चलेंगे, अलग-अलग नहीं। नहीं तो हो सकता है कि हममें से भी कोई खा जाय।”

टोली के सरदार की बात से सहमत होकर चारों नन्हे को एक साथ बाग में खोजने चल दिए। इन्होंने एक ओर से बाग देखना शुरू किया। दो एक तरफ को देखते जाते थे और दो दूसरी तरफ को। पर करीब-करीब सारा बाग छान लेने पर भी उन्हें नन्हे दिखाई न दिया। अब तो चारों बहुत परेशान हुए। चलते-चलते सबके पैरों का कच्मर निकल गया था और अब एक-एक कदम बड़ी कठिनाई से उठ रहा था।

मुन्नी ने अशंका प्रकट की, “कहीं नन्हे को भूतों ने तो नहीं पकड़ लिया?”

खुद दादा को भी कुछ ऐसी ही शंका पैदा होने लगी थी। नहीं तो नन्हे अचानक बाग में से गायब कहाँ हो गया? फिर भी उसने पूछा, “नन्हे को कौन-कौन से फल पसन्द थे? वह जरूर उन्हीं पेड़ों के आस-पास होगा, जिनके फल उसे पसन्द थे।”

“पर आज तो उसका विचार सभी फलों का स्वाद चखने का था,” मुन्नी ने अपनी जानकारी सबके सामने प्रकट की।

“और फिर उसे कोई खास फल पसन्द हो तब ना। वह तो हर पोल के माल को स्वाद ले-लेकर खाता है।” आशा ने अनुभव से बात कही।

इधर बेचारे बिरजू की हालत इस समय बहुत खराब हो रही थी। एक तो उसके सिर पर नींद का भूत सवार था, दूसरे उसकी टाँगें थककर चूर हो रही थी और तीसरे अब उसे प्यास ने भी आ घेरा था। उसने रोना-सा मुँह बनाकर कहा, “दादा, मुझे तो बड़ी जोर की प्यास लग रही है। कहीं पानी नहीं मिल सकता?”

बिरजू ने इस समय सबके मन की बात कह दी थी। सुबह से थाम होने को आई, अभी तक एक बूँद पानी भी किसी के मुँह में नहीं गया था। प्यास सबको ही बड़ी जोर से लग रही थी लेकिन नन्हे के खो जाने के कारण किसी ने अभी कहा नहीं था।

मुन्नी ने अपने सूँघे हाँडों पर जीभ फेरते हुए कहा, “प्यास तो मुझे भी बहुत लग रही है, पर यहाँ पानी कहाँ है?”

“बाग में कहीं-न-कहीं तो नल होगा,” बिरजू वहीं घास पर बैठ गया। अब वह एक कदम भी नहीं चल सकता था।

“मुसीबत तो यही है कि बाग में कोई भी नल नहीं है। मैं नन्हे के साथ-साथ नल को भी देखनी आ रही हूँ। मुझे तो कोई नल दिखाई दिया नहीं,” आशा ने कहा। उसे बहुत पहले से प्यास लगने लगी थी, इसलिए वह बराबर यह देखती चल रही थी कि बाग में कहीं नल भी है या नहीं।

दादा अच्छी परेशानी में फँसा। एक ओर तो लाख कोशिश करने पर भी नन्हे नहीं मिल पा रहा था और दूसरी ओर प्यास और थकान के मारे सबका बुरा हाल था। दादा सोचने लगा कि इससे तो अच्छा था कि बड़ों के अत्याचार ही सहन कर लिए जाते। बड़ों की दुनिया में कम-से-कम प्यासा तो नहीं मरना पड़ता! पर अब तो बापम लौटने का रास्ता भी बन्द हो चुका था। और फिर नन्हे को खोकर वापस भी क्या मुँह लेकर लौटा जाए। नन्हे के भैया को



नन्हे पेड़ की जड़ के पास हरी-हरी दूब पर आराम से सोया पड़ा था

जब पता चलेगा कि हम सब नन्हे को भूतिया हवेली में खो आए हैं, तो वे मेरा तो मारते-मारते कचूमर निकाल देंगे।

अभी दादा यह सब सोच ही रहा था कि मुन्नी खुशी से चिल्लाई, “मिल गया ! नन्हे मिल गया !!”

“कहाँ ?” तीनों बच्चों के मुँह से एक साथ निकला।

“वहाँ, उस पेड़ के नीचे !” मुन्नी ने लगभग दस गज की दूरी पर खड़े एक पेड़ के नीचे इशारा किया।

तीनों की निगाहें एक साथ पेड़ के नीचे दौड़ गईं। सचमुच नन्हे पेड़ की जड़ के पास हरी-हरी दूब पर आराम से सोया पड़ा था। उसे दोन-दुनिया की कुछ खबर नहीं थी।



नन्हे को सोया देख बिरजू के तन-बदन में आग लग गई। नन्हे रात को भी उसे चकमा देकर आधा घंटे के लिए सो लिया था और अब भी बाग में मखमली घास पर आराम से सोया पड़ा था। लेकिन बिरजू को अभी तक एक मिनट को भी पलकें झपकाने का मौका नहीं मिला था।

दादा ने नन्हे को झंझोड़कर जगाया। नन्हे आँखें मलता हुआ उठ खड़ा हुआ। इस समय बच्चा-पार्टी के चारों सदस्यों को नन्हे पर बेहद क्रोध आ रहा था। नन्हे के कारण ही उन सबकी टांगों का हलचा वन गया था। जब तक नन्हे आँखें मलता रहा और अंगड़ाइयाँ तोड़ता रहा, तब तक सभी चुपचाप क्रोध से उसे घूरते रहे। किसी ने कुछ नहीं कहा। जब वह कुछ शान्त हुआ, तो दादा ने शुरूआत की, “कुछ देर और सो लीजिए, बाबूजी ! ज्यादा देर नहीं हुई है ! आप थक भी तो काफी गए होंगे ! कहो तो आपकी टांग दबा दूँ !”

“और मुझे आशा मिले तो मैं सिर दबा दूँ ! आशा लोरी सुना देगी। हम सब आपकी ही नौकरी बजाने के लिए तो यहाँ आए हैं,” बिरजू ने ताना कसा।

“हाँ मालिक, कोई हुक्म दो। कहो तो आपके टेढ़ी-मेढ़ी टांग

वाले को नहला लाऊँ ! मुझे तो वह बहुत ही अच्छा लगता है,” मुन्नी भला कैसे चुप रह सकती थी।

नहती गंगा में आशा ने भी हाथ धो लिए, “तुम सब सेठजी को परेशान क्यों कर रहे हो ! देखते नहीं वह इस समय कुछ सोच रहे हैं !”

नन्हे आँखें फाड़-फाड़कर चारों की ओर देख रहा था। वह चकराकर बोला, “दादा, तुमने मुझे पहचाना नहीं। मैं तो नन्हे हूँ, नन्हे ! तुम्हारे साथ जो भूतिया हवेली में आया था !”

“जी जनाब, वह तो हमें पता है लेकिन तुम्हें भी कुछ पता है !” मोहन दादा ने क्रोध से कहा।

“क्या ? क्या बात हो गई ?” नन्हे ने फिर आश्चर्य में पड़कर पूछा। उसकी समझ में कुछ गोरखधंधा ही नहीं आ रहा था।

“लो, और सुनो ! बूढ़ते-बूढ़ते हमारी टांगों की तो चटनी पिस गई और उन्हें बात का ही पता नहीं !” यह मुन्नी थी।

“हम मरें या जिएं ! इसे क्या मतलब ?” बिरजू फुफकारा। सबसे अधिक क्रोध इस समय बिरजू को ही आ रहा था।

“बस, इसे तो अपनी पड़ी रहती है। दुनिया जाए भाड़ में, इसे सोने को मिलना चाहिए !” आशा ने तीर मारा।

बात अब धीरे-धीरे नन्हे की समझ में आने लगी थी। वह समझ गया कि बच्चा-पार्टी का सारा क्रोध उस पर नहीं उसकी नींद पर है। उसने एक अंगड़ाई लेकर दादा से कहा, “दादा, बड़ी प्यास लगी है। पानी कहाँ है ?”

सुनते ही चारों बच्चे जलकर राख हो गए। नन्हे अब भी अपने ही आराम की सोच रहा था। उसे इस बात की कोई चिन्ता नहीं थी कि उसके साथी उसे देखकर जल रहे हैं। बिरजू ने मन-ही-मन

निश्चय किया कि आज वह नन्हे को मारते-मारते उसका भुरता बना देगा। आशा की इच्छा उसे कच्चा ही चबा लेने की हो रही थी। दादा क्रोध से पागल होकर फुंकारा, “तूने क्या हमें अपना नौकर समझ रखा है? जनाब ठाट से सोए पड़े रहे और ढूँढते-ढूँढते हमारे पैरों में छाले पड़ गए। ऊपर से अब पानी लाकर दो। अच्छा होता कोई भूत पकड़कर ले जाता।”

“हमें तो लाख सिर पटकने पर एक बूद पानी नहीं मिला और इन्हें यहीं आराम से पानी आना चाहिए,” मुन्नी भी गरम हो गई।

नन्हे समझ गया कि बिना चापलूसी के उसका काम नहीं चलेगा। चारों उस पर जले-भुने बैठे थे। इस समय तौ नम्रता और खुशामद से ही काम निकल सकता था। वह गिड़गिड़ाकर बोला, “आप सब तो मुझ बच्चे पर बेकार नाराज हो रहे हैं। मेरा तो कोई कसूर भी नहीं। मैं जैसे ही पेड़ पर से फल खाकर उतरा, मुझे नींद ने आ दबोचा। एक तो मैं सबसे छोटा हूँ और फिर रात-भर का जागा हुआ भी था। नींद का सामना कैसे कर सकता था?” नन्हे ने सारी बात सच-सच कह दी।

मोहन दादा सोचने लगा कि नींद के सामने तो बड़े-बड़े महारथियों को झुकना पड़ता है। और फिर नन्हे तो रात-भर का जागा हुआ था। अगर पेट भरते ही उसे नींद आ गई तो इसमें उस नन्हे-मुन्ने का क्या दोष? उसे अब धीरे-धीरे नन्हे पर तरस आने लगा। पर बिरजू इतनी जल्दी पसीजने वाला न था। उसने तुरन्त कहा, “रात-भर तो मैं भी जागा था लेकिन मैं तो अभी तक नहीं सोया।”

“तुम बड़े भी तो हो, बिरजू भैया,” नन्हे ने बड़ी नम्रता से उत्तर दिया।

इस दाव से बिरजू पहलवान भी मात खा गए। वह सोचने लगा

रहा था। बाग में अब शूष नहीं रही थी। दिन छिपने ही वाला था आशा बोली, “और फिर आज क्या सारी रात यहीं बाग में भ्रमरगति है? रात होने से पहले-पहले सोने के लिए भी तो कोई अच्छा-सा स्थान खोजना है।”

“हाँ, मेरा भी यही विचार है। अब एक मिनट भी बरबाद नहीं करना चाहिए,” कहकर मोहन दादा उठ लिया।

मोहन दादा के पीछे-पीछे टोली के दूसरे सदस्य भी उठ लिए। तभी दादा को अचानक कुछ याद आया। उसने कहा, “लेकिन हमने आम का खाना तो खाया ही नहीं। रात-भर क्या भूखों मरना है!”

“पर मुझे तो भूख से ज्यादा प्यास लग रही है। पहले तो मैं पानी पिऊँगी।” आशा बोली।

“और मुझे भूख और प्यास दोनों से नींद ज्यादा लग रही है। सबसे पहले तो मैं सोऊँगी,” बिरजू उतावला होकर बोला।

तभी मुन्नी खुशी से उछल पड़ी। वह चिल्लाई, “पानी मिल गया! पानी मिल गया!”

“कहाँ?” चारों के मुँह से एक साथ निकला।

दादा जल्दी से अपने आगे-पीछे, दाएँ-बाएँ, चारों तरफ देखने लगा कि मुन्नी को पानी कहाँ मिल गया है। पर उसे कहीं पानी का नामोनिशान भी दिखाई न दिया।

“कहाँ, बाद में बताऊँगी। पहले यह बताओ कि इस बाग में कहीं नारियल के पेड़ हैं?” मुन्नी ने पूछा।

“हाँ हैं, इस ओर है,” नन्हे ने दक्षिण की ओर हाथ से इशारा करके कहा। जब वह बाग में घूम रहा था, तब उसने नारियल के बहुत से पेड़ देखे थे।

“तो बस, वहीं चलो,” मुन्नी एक बार फिर उछली।

कि सचमुच उसे बड़ा होने के कारण कुछ कष्ट अधिक सहन करना चाहिए।

इस समय टोली के चारों सदस्यों के हृदय में नन्हे के लिए प्रेम उमड़ पड़ा था। वे सोच रहे थे कि उन्होंने बिना कसूर ही बेचारे नन्हे को इतने सारे ताने सुनाए। उसका तो कोई कसूर भी न था। सारा कसूर तो नींद का था।

इधर नन्हे को बड़ी जोरों की प्यास सता रही थी। जब उसने देखा कि उसका तीर ठीक निशाने पर बैठा है, तो उसने तुरन्त कहा, “यहाँ नल कहाँ है? मेरा तो प्यास के मारे गला सूखा जा रहा है।”

“नन्हे, यहाँ पर हमें कहीं नल ही तो नहीं मिल रहा। प्यास के मारे तो मेरी भी हालत खराब है। सुबह से एक बूद पानी मुँह में नहीं गया है। पर नल कहाँ मिले?” आशा ने प्यार से उत्तर दिया।

नन्हे ने आश्चर्य से पूछा, “क्या बाग में एक भी नल नहीं है?”

“होश तो जरूर पर हमें मिल नहीं रहा,” मुन्नी ने उत्तर दिया। उसे पूरा विश्वास था कि हर बाग में कम-से-कम एक नल जरूर होता है; क्योंकि उसके चाचा के तीनों बागों में एक-एक नल था।

“वैसे ही होगा! होता तो मुझे दिखाई न देता! मैं तो चारों ओर देखती चल रही थी,” आशा ने तुनककर कहा।

बिरजू ने पूछा, “दादा, जब बाग में नल नहीं तो भूत पानी कहाँ से पीते होंगे?”

“नल बाग में ही तो नहीं है। उनके गुसलखाने में तो होगा। वहीं से भूत पानी पीते होंगे,” दादा ने समझाया।

“तो फिर भूतों का गुसलखाना ही खोजो। मेरा तो प्यास के मारे दम निकला जा रहा है,” नन्हे ने आतुरता से कहा।

इस समय मुरज जल्दी-जल्दी बापम घर लौटने की तैयारी कर

“लेकिन वहाँ कोई नल नहीं है,” नन्हे ने मुन्नी को सुझाया। उसे नारियल के पेड़ों के आस-पास कोई नल नहीं दिखाई दिया था।

“नल न हो पर पानी तो है,” मुन्नी रौब झाड़ने लगी।

“भला कैसे?” यह बात दादा की समझ में भी नहीं आई।

“कैसे, कहाँ, क्यों, ये सब मैं वहीं चलकर बताऊँगी,” मुन्नी ने फिर रौब से कहा।

इस समय सबने चुपचाप मुन्नी का कहा मान लेना ही उचित समझा। बिना विरोध किए पाँचों नारियल के पेड़ों की ओर चल दिए। प्यास के कारण सबकी जान निकली जा रही थी। इस समय उन्हें पानी की सख्त जरूरत थी चाहे पानी कहीं से भी आए।

पेड़ के पास पहुँचकर मुन्नी ने रौब से हुकम दिया, “बिरजू, पेड़ पर चढ़कर एक कच्चा नारियल तोड़ो। मैं तुम सबको पानी पिलाऊँगी।”

मुन्नी के इतना कहते ही सबकी समझ में आ गया कि पानी कहाँ से आयेगा। मुन्नी का इरादा अपने साथियों को नारियल का पानी पिलाने का था। कच्चे नारियल का पानी पीने में बहुत मीठा और स्वादिष्ट होता है। चारों ने मन-ही-मन मुन्नी की सूझ की प्रशंसा की। परन्तु दादा ने ऊपर से बात बताते हुए कहा, “इसमें तू क्या पिलायेगी? नारियल का पानी तो हम खुद ही पी लेंगे।”

“पिओगे तो खुद ही, पर तरकीब तो मैंने ही बताई है!” मुन्नी तुनक कर बोली।

“तरकीब बताने से होता क्या है? असली बात तो काम की होती है, काम की!” बिरजू ने भी मुन्नी को चिढ़ाया और पेड़ पर चढ़ गया।

पेड़ पर से उसने बहुत से कच्चे-कच्चे नारियल तोड़कर नीचे गिरा दिए। पाँचों ने मिलकर उन्हें फोड़ा और जी भरकर अपनी

प्यास बुझाई। इसके बाद बाग के फलों को एक बार फिर पेट भरकर चखा गया। रात को पेट के लिए और कुछ मिलने की आशा न थी, इसलिए किसी ने भी पेट भरने में कसर न छोड़ी। बच्चा-पार्टी के पाँचों वीर अच्छी तरह से खा-पीकर अगले मोर्चे के लिए तैयार हो गए।



पाँचों ने नारियल का पानी पीकर अपनी प्यास बुझाई



पेट भरने पर सोने की सूझती है। खाने-पीने से छुट्टी पाकर बच्चा-पार्टी को भी नींद सताने लगी। नन्हे बोला, “दादा, क्यों न आज रात बाग में ही सोया जाए। आराम से किसी पेड़ के नीचे डेरा डाल दो।”

“रात को भूत आयेंगे,” मुन्नी ने ध्यान दिलाया।

“अरे हाँ, आज रात तो भूतों से मित्रता करनी है। तभी तो हम यहाँ पर बच्चों की दुनिया बसा सकते हैं,” दादा ने सहमति जताई।

“दादा, भूत होते कैसे होंगे?” नन्हे ने मुँह बनाकर पूछा।

“अब देर ही कितनी-सी है। अपनी आँखों से ही जो देख लेना कि भूत कैसे होते हैं,” कहकर बिरजू ने आँख मली।

“बस, यहाँ बैठे बातें बनाते रहोगे। देखते नहीं रात होने को आँखें सोने का भी तो कुछ इंतजाम करना है,” कहकर दादा कमीज भाड़ कर उठ खड़े हुए।

अपनी टोली के सरदार के पीछे-पीछे बच्चा-पार्टी के अन्य चारों सदस्य भी चल पड़े। दादा ने एक चक्कर काटकर नारियल के पेड़ों को पार किया और बाग की दूसरी ओर चल पड़े। वे इस समय जल्द-से-जल्द रात को सोने के लिए कोई सुरक्षित-सा स्थान खोज लेना चाहते थे।

बाग की सीमा समाप्त हो जाने पर इस ओर भी कमरों की एक लम्बी पंक्ति खड़ी थी। इस पंक्ति के कमरे पहली पंक्ति के समान एक से न थे। इनमें कुछ तो बहुत छोटे थे और कुछ बहुत बड़े थे।

इतने सारे कमरों को देखकर मोहन दादा सोच में पड़ गया कि किस कमरे में चला जाए। धीरे-धीरे उसका हाथ उठकर अपने आप उसकी ठोड़ी पर पहुँच गया।

बिरजू आतुर होकर बोला, “अब आगे चलना है या यहीं मिट्टी के माधो की तरह खड़े रहना है। मैं तो...”

“चलना तो है पर चला किस कमरे में जाए?” दादा को अब सोचते-सोचते काफी देर हो गई थी, इसलिए उसने सिर खुजलाना शुरू कर दिया।

लेकिन आशा इस बेकार के सिर खुजलाने से मन-ही-मन फुँकी जा रही थी। उसकी समझ में इस समय ऐसी कोई समस्या नहीं उलझी हुई थी, जिसके कारण दादा को इतनी देर सिर की मालिश करनी पड़े। उसने मन-ही-मन पेंच-ताव खाकर कहा, “क्या सिर को जूँ खा गई? इस बेचारी खोपड़ी पर कुछ तो तरस खाओ।”

“आशा...!” मोहन दादा ने क्रोध से लाल-लाल आँखें निकाल कर आशा को घूरा। वह अपने सिर के बारे में इतने अपमानजनक शब्द नहीं सुन सकता था।

“तो फिर अब तक खड़े-खड़े क्या कर रहे थे? मैं समझी शायद वालों में कोई जूँ घुस गई है।” आशा एकदम नम्र पड़ गई। यह सच था कि वह दादा का रौब कुछ कम मानती थी लेकिन दादा के क्रोध से उसे भी डर लगता था।

“किसी ने सच कहा है, जो जैसा होता है, उसे दूसरा भी वैसा ही दिव्वाँ देना है। खुद के सिर में जूँ पड़नी है तो दादा के सिर

में भी जूँ दिखाई पड़ने लगी," मुन्नी ने आँख-मुँह मटकाए।

मुन्नी के उलाहने से दादा को थोड़ी-सी शान्ति तो मिली पर पूरी तरह से गरमी नहीं उतरी। वह आशा को इस बार कोई अच्छी-सी सोख देना चाहता था, जिससे आशा बात बात में टांग अड़ाना छोड़ दे। उसने सामने कमरों की ओर आश्चर्य से आँखें चौड़ाकर देखा और कहा, "अरे, वह देखो भूत! ग़मने भूत खड़ा है, भूत!"

बिरजू इस समय नींद के कारण सोया-सा हो रहा था लेकिन भूत का नाम सुनते ही उसने चौंकर सामने देखा। नन्हे पास खड़ी आशा से लिपट गया। मुन्नी लपककर दादा के पीछे छिप गई।

"कहाँ है भूत?" कुछ क्षण बाद साहस करके आशा ने दादा से पूछा। उसे सामने कोई भूत नजर नहीं आ रहा था।

"वह खड़ा...वह रहा! देखो, अब वह हँस रहा है!" मोहन दादा ने सामने की ओर अंगुली उठाकर कहा। वह आँखें फाड़-फाड़कर सामने की ओर देख रहा था।

सुनते ही आशा को नन्हे ने और जोर से जकड़ लिया। मुन्नी ने दादा की कमर पकड़ ली। बिरजू के पैर थर-थर कांपने लगे। आशा जल्दी-जल्दी कभी दादा की ओर और कभी सामने कमरों की ओर देखने लगी। सभी इस समय सहमे से कमरों के पास भूत देखने की कोशिश कर रहे थे। पर दादा के अलावा किसी को भूत नहीं दिखाई पड़ रहा था।

मोहन दादा अब भी उसी प्रकार अंगुली उठाए, आँखें फाड़-फाड़ कर भूत को देख रहा था।

इस बार बिरजू ने थोड़ा-सा साहस करके पूछा, "दादा, हमें तो दिखाई ही नहीं पड़ रहा, भूत कहाँ है?"

"तुम्हें दिखाई नहीं पड़ रहा होगा, पर मुझे साफ़ दिखाई पड़ रहा

है। वह सामने दरवाजे से लगा खड़ा है। बड़ा-बड़ा मुँह, हाथी की सूंड जैसी नाक, भील से भी बड़ी-बड़ी आँखें..."

यह सुनकर चारों नन्हों के दिल काँप गए। आशा ने नन्हे को कुछ और पास से दबोच लिया। मुन्नी भी दादा की पीठ से चिपक गई। बिरजू लम्बी-लम्बी साँसें लेने लगा। उसे मौत अपने सिर पर मंडराती दिखाई दे रही थी।

दादा बराबर कहे चला जा रहा था, "मकान जितने बड़े-बड़े पैर, हाथ क्या पूरी रेलगाड़ी है, रेलगाड़ी...और कान तो..."

"दादा, भूत के बाल तो हैं ना?" नन्हे ने आशा से चिपटे-चिपटे ही पूछा।

पर दादा नन्हे के प्रश्न का उत्तर दिए बिना कहता रहा, "कान तो जैसे पूरा हाथी ही हो! कितना डरावना चेहरा है! अरे, यह तो हिलने लगा! यह तो चल भी पड़ा!! भागो, यह तो हमारी तरफ ही आ रहा है।"

इस समय चारों वच्चों की निगाहें दादा के चेहरे पर जमी हुई थीं, जो टकटकी लगाए सामने भूत को देख रहा था। दादा के मुँह से भागने का नाम सुनते ही सब जान छोड़कर बाग की ओर भागे। सबके पीछे-पीछे दादा भी भागा। वह भागते-भागते भी चिल्ला रहा था, "अरे, यह तो भूत भी हमारे पीछे-पीछे भागने लगा। और जोर से भागो नहीं तो भूत हमें पकड़ लेगा। और जोर से...और जोर से..."

पाँचों नन्हे अंधाधुन्ध तेजी से भागे चले जा रहे थे। हरेक जल्दी से जल्दी दूर भाग जाना चाहता था, जिससे भूत उसे न पकड़ सके। दूसरे साथी-क्या कर रहे-हैं, कहाँ-हैं, यह देखने या ज़मने की चिन्ता किसी को न थी। इस समय हरेक को अपनी ही अपनी पड़ी हुई थी। दादा एक बार फिर चिल्लाया, "आशा, भाग! तेजी से भाग! भूत तेरे

पीछे ही भाग रहा है।"

आशा भागते-भागते हाँफ गई थी। उसकी चाल कुछ धीमी पड़ गई थी। लेकिन यह सुनकर कि भूत उसके पीछे ही भाग रहा है वह एक बार फिर पूरा दम लगाकर भागी। बिरजू भागते-भागते हाँफकर एक पेड़ के तने से जा चिपका था। उसने अब जीने की आशा छोड़ दी थी और पेड़ के तने से चिपका अपनी मौत का इन्तजार करने लगा था। नन्हे भागते-भागते ठोकर खाकर एक तरफ की लुढ़क गया था। एक बार गिर पड़ने पर फिर उससे उठा नहीं गया। मुन्नी भागकर बरगद के एक बड़े तने में छिप गई। उसकी साँस बहुत तेज चल रही थी और आँखों में डर समाया हुआ था।

मोहन दादा अब भी बराबर चिल्ला रहा था, "आशा, और तेज, और तेज! भूत सबको छोड़ बस तेरे पीछे ही भाग रहा है। जल्दी से दायें को मुड़ जा, दायें को... अब फिर बायें को भाग, बायें को...तेज भाग...तेज..."

आशा दादा के कहने के अनुसार बहुत तेज भाग रही थी। उसका सारा शरीर पसीने से तर हो गया था। पैर मन-मन भर के भारी हो गए थे लेकिन तब भी वह पूरा जोर लगाकर भाग रही थी, भाग रही थी... भागे जा रही थी। अन्त में थककर वह जमीन पर गिर पड़ी। गिरते ही उसने सहमकर आँखें मूंद लीं और उस क्षण का इन्तजार करने लगी, जब भूत उसे पकड़कर खा जायेगा। अब उसे भूत से बचने की कोई आशा नहीं रही थी।



जब बहुत समय बीत जाने पर भी भूत ने आशा के हाथ नहीं लगाया, तो आशा को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि भूत उसे कच्चा चबाने में देरी क्यों कर रहा है? वह आँखें मूंदे उस क्षण का इन्तजार कर रही थी, जब भूत उसे अपने हाथों में खिलौने की तरह उठायेगा और अपने मुँह में रख लेगा।

तभी मोहन दादा चिल्लाया, "भूत भाग गया! भूत गया! भूत आशा को छोड़कर चला गया!"

दादा की चिल्लाहट सुनकर बिरजू पेड़ का तना छोड़कर सीधा खड़ा हो गया। मुन्नी ने बरगद के तने में से सिर निकालकर बाहर की ओर झाँका। नन्हे ने गिरते ही सहमकर दोनों हाथों से आँखें बन्द कर ली थीं। उसने भी आँखें खोलकर देखा। सब यह निश्चय करना चाहते थे कि भूत सचमुच भाग गया है या नहीं। लेकिन वह न तो पहले ही उनमें से किसी को दिखाई दे रहा था और न अब ही उसका पता-निशान मिलता था।

दादा एक बार फिर चिल्लाया, "सब यहाँ मेरे पास आ जाओ। अब भूत यहाँ नहीं है। भूत गया।"

तीनों धीरे-धीरे चलकर अपनी टोली के सरदार के पास पहुँच गए।

आशा ने अब भी आँखें न खोली थीं। वह अब भी सिकुड़ी-सिमटी-सी जमीन पर पड़ी थी। दादा यह देखकर घबरा गया। उसे डर लगने लगा कि कहीं आशा बेहोश न हो गई हो। वह दौड़कर आशा के पास पहुँचा। विरजू, मुन्नी और नन्हे ने भी दौड़कर उसे जा घेरा। मोहन दादा ने उसे झटका, “आशा! आशा, क्या हो गया?”

“भ...भ...भ...भूत...भूत!” आशा ने आँखें बन्द किए ही हकलाकर कहा और करबट लेकर दादा की बाँह कसकर पकड़ ली। वह बहुत सहमी हुई थी।

“भूत तो गया, आशा।” विरजू ने उसे धीरे-धीरे बाँधायी।

“इतनी बड़ी होकर भूत से डरती है!” मुन्नी ने उसे उलाहना दिया।

दादा ने आशा का सिर सहलाते हुए कहा, “हाँ आशा, अब भूत नहीं है। खड़ी हो। तू तो भूत से बहुत ही डरती है।”

आशा को अब पूरी तरह विश्वास हो गया था कि भूत चला गया है। वह एकदम उछलकर बैठ गई और बोली, “कौन कहता है मैं भूतों से डरती हूँ? मैं तो तुम सबको तमाशा दिखा रही थी।”

“अच्छा, यह बात थी! मैं तो समझी थी भूत तमाशा दिखा रहा है!” मुन्नी ने आँख मटकाकर कहा।

आशा ने तुरन्त बात पलट दी, “दादा, भूत हमें क्यों नहीं दिखाई दिया?”

आशा का प्रश्न सुनकर दादा चकरा गया। उसकी समझ में न आया कि क्या जवाब दे। वास्तव में न तो वहाँ कोई भूत आया था और न ही कोई भूत आशा के पीछे भागा था। उसने आशा को परेशान करने के लिए ही यह डरावना खेल खेला था। वह कुछ सोचता-मा बोला, “यही बात तो मेरी भी समझ में नहीं आ रही। कहीं ऐसा

तो नहीं कि भूत मच बोलने वाले आदमियों को ही दिखाई देता हो?”

“और दादा, ऐसा भी तो हो सकता है कि भूत हमेशा भूत बोलने वाले आदमियों को ही दिखाई देता हो!” नन्हे ने भोला-सा मुँह बनाकर दादा की ओर देखा।

नन्हे को बात सुनकर दादा खिसिया गया। उससे कोई ठीक उत्तर न देते बन पड़ा। नन्हे ने उसकी बात को जड़ से उखाड़ फेंका था। वह बोला, “हाँ, कोई बात तो जरूर है। नहीं तो भूत तुम सबको क्यों नहीं दिखाई दिया?”

“और दादा, भूत ने आशा को क्यों नहीं खाया?” वह प्रश्न मुन्नी का था।

“यह भी कोई पूछने की बात है। भूत तो बच्चों को प्यार करते हैं, खाते नहीं!” मुन्नी के प्रश्न का जवाब दादा ने न देकर विरजू ने दिया।

“पर दादा, जब भूत आशा को खाना नहीं चाहता था, तो वह उसके पीछे क्यों भागा?” नन्हे ने फिर प्रश्न किया। उसके दिमाग में एक के बाद एक प्रश्न पैदा हो रहे थे।

“पगले, भूत आशा को खाने के लिए उसके पीछे नहीं भागा था। वह तो उसे प्यार करने के लिए उसके पीछे भागा था।” दादा ने यहाँ अपनी सूझ से काम लिया।

आशा सोचने लगी कि वह भी कितनी पगली है! जब भूत उसके पीछे भागा था, तो उसे भागने की क्या जरूरत थी। भूत तो उसे प्यार करने के लिए आ रहा था। वह कोई खाने के लिए तो उसके पास आ नहीं रहा था। भूत उससे प्यार करता, उससे मित्रता करता, उसे रात को सोने के लिए नरम-नरम बिस्तर देता और फिर सब

मिलकर इस भूतिया हवेली में बच्चों की दुनिया बसाते। वह अब मन-ही-मन अपनी इस महान् गलती पर पछताने लगी।

उधर विरजू पर नींद का भूत सवार था। उससे अब एक-एक मिनट काटनी भारी हो रही थी। रुझा-सा होकर बोला, “दादा, अब मेरे सोने का कुछ इन्तजाम करते हो या नहीं?”

मोहन दादा को इस बार सचमुच विरजू पर दया आ गई। उसने लपककर एक टाट का थैला कंधे पर लादा और कमरों की ओर बढ़ चला। पीछे-पीछे चार नन्हे बहादुर भी आगे बढ़े। एक कमरे के दरवाजे पर पहुँचकर दादा ने दरवाजे को धक्का दिया। दरवाजा ‘चर्र...चर्र...’ की आवाज करता खुल गया। सीलन की बदबुदार हवा चारों ओर फैल गई। सामने एक बड़ा कमरा खाली पड़ा था। प्राँचों कमरे के अन्दर चले गए।

सूरज अब तक डूब चुका था लेकिन चारों ओर पूरी तरह अन्धकार नहीं छाया था। हलकी-हलकी रोशनी में कमरे के अन्दर का भाग साफ दिखाई देता था।

नन्हे ने एक बार खाली कमरे में चक्कर लगाया और कहा, “वहाँ तो बड़ी सील है। इतनी बदबू में भूत कैसे रहते होंगे?”

“भूत कैसे रहते होंगे!” विरजू ने नन्हे की ओर मुँह विराया और फिर दादा की ओर देखकर कहा, “अच्छा, मैं तो सोया।”

“यहीं पर?” दादा ने आश्चर्य से विरजू की ओर देखा, “कोई अच्छा-सा कमरा खोज लेने दे। तब सोना।”

तब तक आशा ने कमरे में बना दूसरा दरवाजा खोल लिया था। वह चिल्लाई, “यह कमरा अच्छा है, दादा। बड़ा भी है और इसमें बदबू भी नहीं है।”

आशा की बात सुनकर चारों दूसरे कमरे की ओर लपके।

सचमुच यह कमरा बहुत बड़ा था और इसमें सीलन की बदबू नहीं थी। मुन्नी ने कमरे के चारों ओर दृष्टि फेंककर कहा, “दादा, इसमें पाँच तो क्या पाँच हजार आ जाएँ।”

“मुझे तो यह हॉल-कमरा सा लगता है,” आशा ने अपनी राय प्रकट की।

इस कमरे में छः दरवाजे और बहुत से झरोखे थे। कुछ पुराने ढंग की अलमारियाँ भी थीं। मोहन दादा यह देखने के लिए कि अलमारियों में क्या है, एक अलमारी खोलने लगा।

तभी नन्हे ने पूछा, “दादा, हमें भूत अभी तक क्यों नहीं दिखाई दिए?”

भूत का नाम सुनते ही दादा के हाथ अलमारी खोलते-खोलते रुक गए। विरजू चौंका। आशा ने जल्दी से खुले हुए दरवाजे की ओर ताका और मुन्नी ने दोबारा एक सिरे से सारे कमरे में दृष्टि दौड़ाकर देखा कि भूत कमरे में तो नहीं है। जब सबको विश्वास हो गया कि भूत कमरे में नहीं है, तो दादा नन्हे को डाँटता हुआ बोला, “ऐसी जल्दी क्या पड़ी है! पूरी तरह से रात तो हो जाने दे, तुम्हें भी दिखाई पड़ जायेगा।”

“पर दादा, तुम्हें भूत शाम को ही कैसे दिखाई पड़ गया? भूत तो बस रात को ही दिखाई देता है,” मुन्नी ने पूछा। जब से भूत ने उनसे दौड़ करवाई थी, तब से वह इसी पहली को सुलझाने की कोशिश कर रही थी।

दादा ने अपना सिर खुजलाया और उसे एक बढ़िया उत्तर सूझ गया। वह बोला, “शाम को भूत केवल टोली के सरदार को ही दिखाई देता है लेकिन रात में वह सबको दिखाई देता है। तभी तो शाम को भूत केवल मुझे ही दिखाई दिया।”



“यह भूतों के राजा का सिंहासन है।” मोहन दादा ने अकड़कर कहा।

याद नहीं आ रहा था।

“अरे, यह पत्थर की कुर्सी तो हिलती भी नहीं,” आशा ने कुर्सी के पास पहुँचकर उसे हिलाने की कोशिश की।

“ठहर! इसे छू मत! यह भूतों के राजा के लिए है, राजा के लिए!” दादा लपककर कुर्सी के पास पहुँचा। वह अब भी उस कुर्सी का विशेष नाम याद करने की कोशिश कर रहा था, जो उसने कहानी की किताब में पढ़ा था। अचानक उसे नाम याद आ गया। वह अकड़कर बोला “जानते हो इस कुर्सी का क्या नाम है?”

“नहीं तो!” चारों के मुँह से एक साथ निकल पड़ा।

सुनकर मोहन दादा कुछ और अकड़ गया, “इस कुर्सी का नाम है सिंहासन। यह भूतों के राजा का सिंहासन है।”

नाम कुछ कठिन था, इसलिए बच्चों ने उसे एक बार मन-ही-मन दोहराया। उन्हें डर था कि कहीं वे कुर्सी के इस नाम को भूल न जाएँ।

आशा बोली, “भूतों को तो सफाई रत्ती-भर नहीं आती। इतनी अच्छी-अच्छी चीजों को भी नहीं भाड़ते!”

“भरों ने इतने सुन्दर कंडीलों का नाश कर रखा है,” मुन्नी ने ऊपर टंगे भाड़-फानूसों की ओर देखकर कहा। उसे भाड़-फानूस कंडील-जैसे ही लग रहे थे।

आशा ने मुन्नी की ओर आँखें तरेरीं, मुन्नी ने फिर गलती कर दी थी।

इधर नन्हे का दिमाग हॉल में बने छज्जों में अटका हुआ था। वह बहुत देर से छज्जों की ओर ताक रहा था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि कमरों में छज्जों का क्या काम है। साथ-ही-साथ उन छज्जों पर घड़ने का कोई जीना भी उसे दिखाई नहीं दे रहा था। उसने दादा से पूछा, “इन छज्जों पर कैसे चढ़ा जाता है, दादा? यहाँ

इधर दादा ने एक मुसीबत से छुटकारा पाया और उबर-बिरजू ने भटका देकर एक अलमारी के किवाड़ खोल दिए। अलमारी खाली पड़ी थी। बिरजू जोर से चिल्लाया, “दादा, यह अलमारी तो बिल्कुल खाली है।”

“और यह भी,” दादा ने भी अपनी अलमारी खोल ली थी। फिर क्या था? एक के बाद एक सभी अलमारियाँ खोलकर देखी गईं। लेकिन धूल के अलावा किसी में कुछ भी न मिला।

अलमारियों के बाद दरवाजों की बारी आई। हर दरवाजा किसी न किसी कमरे में खुलता था। केवल एक दरवाजा एक सँकरी-सी गैलरी में जाता था। पाँचों उसी गैलरी से आगे बढ़े। यह गैलरी एक बड़े हॉल में जाकर समाप्त होती थी। यह हॉल पहले कमरे के दुगने से भी अधिक बड़ा था। इसकी चारों दीवारों में ऊपर की तरफ छज्जे निकले हुए थे। सीधे हाथ पर जालीदार सफेद पत्थर का एक सिंहासन बना हुआ था। छत में पाँच भाड़-फानूस लटके हुए थे, जिन पर धूल की एक मोटी तह जमी हुई थी।

इस बड़े हॉल को देखकर पाँचों नन्हे-मुन्नों ने दाँतों-तले अंगुली दबा ली। बिरजू आश्चर्य में पड़कर बोला, “यहाँ तो पत्थर की कुर्सी है, पत्थर की कुर्सी!”

“यह पत्थर की कुर्सी किस काम आती होगी, दादा?” नन्हे ने पूछा।

“मेरा ख्याल है इस पर भूतों का राजा बैठा होगा,” दादा ने कुछ सोचकर उतार दिया। उसने एक कहानी की किताब में एक राजा और उसके महल का वर्णन पढ़ा था। उसे भूतिया हवेली में भी सब-कुछ वैसा ही दिखाई दे रहा था। उसने उस किताब में इस पत्थर की कुर्सी का एक विशेष नाम भी पढ़ा था, जो उसे इस समय

तो कोई जीना ही नहीं।”

दादा ने नन्हे का प्रश्न सुना-अनसुना कर दिया। वह इस समय हॉल-कमरे के किवाड़ों को खोल-खोलकर देख रहा था। किवाड़ भारी और बड़े-बड़े थे, इसलिए उसे उन्हें खोलने में बड़ी कठिनाई हो रही थी। उमने सहायता के लिए बिरजू की ओर देखा। बिरजू पत्थर के सिंहासन पर सिर टिकाकर सो गया था।





विरजू बहुत देर से सोना चाह रहा था, लेकिन सो नहीं पा रहा था। उसे सोने के लिए कोई उचित स्थान ही नहीं मिल रहा था। कभी स्थान मिलता भी था तो कोई ऐसी विचित्र और आश्चर्यजनक घटना घट जाती थी कि थोड़ी-सी देर के लिए नींद उससे कोसों दूर भाग जाती थी। किन्तु इस बार थोड़ा-सा मौका मिलते ही नींद ने उसे पूरी तरह से आ दबोचा।

मोहन दादा उसे सोया देखकर किवाड़ छोड़कर उसके पास आया। इधर छज्जों से उलभे नन्हे ने अपने प्रश्न का कोई उत्तर न पाकर दादा की ओर देखा। दादा किवाड़ों के पास से नदारत था। उसने धबकाकर जल्दी से सारे कमरे में निगाह दौड़ाई। सिंहासन के पास जाकर उसकी दृष्टि अटक गई। यहाँ विरजू टाँग फँलाए लेटा हुआ था और मोहन दादा उसके बराबर में बैठा उसे घूर रहा था।

“क्या हो गया ?” कहकर नन्हे उसकी ओर लपका।

‘क्या हो गया’ उसने इतनी जोर से कहा था कि छत के भाड़-फाट्टियों को देखने में उलभी आशा और मुन्नी दोनों चौंक पड़ीं। उन दोनों की भी दृष्टि एक साथ दादा और विरजू पर पहुँची। वे दोनों भी दौड़कर उसके पास पहुँचीं।

“क्या हुआ ?” आशा ने दादा के मुँह की ओर देखकर पूछा।

इस प्रकार सोने का स्थान निश्चित हो जाने पर चारों बच्चों ने सोते हुए विरजू को चारों तरफ से पकड़कर उठा लिया और गंगा-डोली करते हुए छोटे कमरे में जाकर लिटा दिया। इसी कमरे में बच्चा-पार्टी को सारी रात बितानी थी। कमरे में अँधेरा छाया हुआ था। मोहन दादा ने टार्च जला लिया।

नन्हे ने फर्श को देखकर भोला-सा मुँह बनाकर पूछा, “दादा, क्या इसी जमीन पर सोना पड़ेगा ?”

“और नहीं तो क्या तुम्हारे लिए मखमल के गद्दे आर्येंगे !” दादा ने मुँह बनाकर उत्तर दिया। वह स्वयं भी आज तक कभी जमीन पर नहीं सोया था, इसलिए उसे थोड़ा-सा गुस्सा आ रहा था।

मुन्नी तुरन्त बोली, “पर आशा तो कहती थी कि भूत हमें सोने के लिए गुदगुदे बिस्तरे देंगे।”

“देते तो पर भूत मिले ही कहाँ ?” आशा ने मुँह बनाया।

“दादा को भूत मिला तो था पर इन्होंने माँगा नहीं,” नन्हे ने शिकायत के स्वर में कहा।

“फुरसत ही कहाँ मिली !” दादा ने साफ भूठ बोल दिया।

नगे फर्श पर लेटते हुए चारों की नानी मर रही थी। चारों मन-ही-मन उस पड़ी को कोसने लगे जिसमें उन्होंने भूतिया हवेली में आने का निश्चय किया था। इधर विरजू आराम से सोया पड़ा था। उसे इस बात की खबर ही नहीं थी कि वह बिस्तर पर सोया है या फर्श पर।

आशा को भी कोई उपाय सुझाई नहीं पड़ रहा था। हारकर उसने फर्श पर ही सोने का निश्चय किया और अपने साथियों को साहस बँधाते हुए बोली, “बस, एक रोज की ही तो बात है, कल तक तो हमारी मित्रता भूतों से हो ही जायेगी। आज किसी तरह इसी

“गया काम से !” दादा ने निगाह उठाकर अपने चारों ओर खड़े आशा, नन्हे और मुन्नी की ओर देखकर उत्तर दिया।

“क्या मतलब ?” आशा ने हड़बड़ाकर पूछा। काम से जाना क्या होता है वह वह नहीं जानती थी।

“मतलब यह है कि सुबह तक के लिए विरजू, सेट आराम से सो गए,” मोहन दादा सीधा खड़ा हो गया।

“बेचारा कल रात का जागा हुआ था, नींद तो आ ही जाती,” मुन्नी ने दया दिखाई।

आशा बोली, “हाँ, अब सोने का समय भी तो हो गया है। हमें भी अब सोने का इन्तजाम करना चाहिए।”

“पर सोया कहाँ जाए ?” दादा ने प्रश्न किया।

नन्हे ने मुझाया, “मेरा तो विचार है कि यहीं विरजू के पास लेट मारो।”

“यहीं ! इतने बड़े कमरे में !! पता भी है रात को भूत आर्येंगे।” मुन्नी ने सहमकर कहा। वह चाहती थी कि वे जिस कमरे में सोएँ उसके किवाड़ चारों तरफ से बन्द हों जिससे रात को उन्हें भूत परेशान न कर सकें।

इधर इतने बड़े कमरे में सोने की बात मोहन दादा को भी पसन्द नहीं आ रही थी। वह बोला, “सचमुच इतने बड़े कमरे में सोना ठीक नहीं है। बराबर वाला कमरा छोटा भी है और अच्छा भी है। मेरे ब्याल से तो आज रात को वहीं सोना चाहिए।” कहकर दादा ने उस दरवाजे की ओर इशारा किया जिसके किवाड़ खोलता-खोलता वह विरजू के पास भाग आया था।

“तो उसी में चलो ! हमें तो सोने से मतलब है,” आशा मोहन दादा की बात से तुरन्त सहमत हो गई।

फर्श पर रात काट लो। फिर कल तो नरम-नरम गुदगुदा बिस्तरा सोने को मिलेगा।”

“और फिर विरजू भी तो फर्श पर सो रहा है। हमें ही कौन-सी ज्यादा मुसीबत पड़ रही है,” मोहन दादा को भी कोई चारा नजर नहीं आ रहा था।

अन्त में जब फर्श पर सोने से बचने का कोई रास्ता नहीं मिला तो चारों ने हथियार डाल दिए। मुन्नी चुपचाप विरजू के पास आकर लेट गई। उसके बराबर में आशा ने अपना डेरा जमाया, फिर इसके बाद नन्हे और मोहन दादा ने रात-भर के लिए सोने लायक जगह बेर ली।

अभी उन्हें लेटे हुए कठिनाई से दो ही मिनट हुए थे कि नन्हे को न जाने क्या सूझी कि वह चुटकी वजाकर बोला, “अरे हाँ, बड़े भैया कहते थे कि फर्श पर सोने से कमर अकड़कर तन्ता हो जाती है। मैं फर्श पर नहीं सोता।”

“भूठ बोलता है ! कहाँ कमर भी तन्ता बन सकती है !” मोहन दादा ने फौरन नन्हे की बात को काट दिया।

“नहीं... सच है ! एक रात भैया फर्श पर सोये थे, अगले दिन सुबह-ही-सुबह उन्होंने सबके सामने कहा था,” नन्हे जोश में उठकर बैठ गया।

“तब तो तेरे भैया की कमर तन्ते की होगी !” मोहन दादा ने चुटकी ली। आशा और मुन्नी खिन्नखिलाकर हँस पड़ीं। नन्हे खिसियाकर लेट गया।

सबको लेटे-लेटे लगभग पन्द्रह मिनट बीत गये। अब कमरे में गुप्त अँधेरा छाया हुआ था। चारों सोने की कोशिश कर रहे थे पर नींद किसी को नहीं आ रही थी। चारों बच्चों के मन में बार-बार यही

बात आ रही थी कि भूत अब आते ही होंगे।

यूँ ही लेटे-लेटे नगभग आधा घण्टा और बीत गया, पर नींद उनके पास भूलकर भी नहीं फटकी। वे जितना भी नींद को बुलाने



लेटे-लेटे आधा घण्टा बीत गया, पर नींद उनके पास नहीं फटकी

की कोशिश कर रहे थे नींद उतना ही उनसे दूर भाग रही थी। लेकिन चारों ही यह समझ रहे थे कि उनके पास लेटा उगवा साथी गहरी नींद में सोया हुआ है, इसलिए कोई मुँह से नहीं बोल रहा था।

जब काफी समय इसी प्रकार मौन लेटे हुए बीत गया तो मुन्नी थोड़ा-सा सिर उपर उठाकर बोली, “दादा, दादा, टार्च जला दो। थोड़ा-सा उजाला हो जायेगा। यहाँ तो हाथ को हाथ नहीं सूझता।”

मोहन दादा ममझ रहा था कि मुन्नी गहरी नींद में सोई हुई है। पर जब उसने उसे बोलते हुए सुना तो उसने कुछ आश्चर्य में गड़कर हलके से पूछा “अरी मुन्नी, अरी मुन्नी, तू अभी सोई नहीं?”

“कहाँ? इतने गुप्प घोंघरे में नींद कहाँ आती है, तुम टार्च जला दो।” मुन्नी हलके से बुदबुदाई। उसे डर था कि कहीं आशा और नन्हे न जाग जाएँ।

मोहन दादा ने जेब से टार्च निकालकर जला दी और दीवार की ओर उसकी रोशनी करके अपने सिरहाने रख दी। कमरे में कुछ दूर तक हलका-हलका प्रकाश फैल गया।

नन्हे ने तुरन्त आँखें खोलकर टोका, “दादा, टार्च मत जलाओ, नहीं तो उजाला देखकर भूत यहीं आ जायेंगे।”

“कमरे के किवाड़ बन्द कर लो, फिर कैसे आ जायेंगे?” कहकर आशा ने करवट बदली।

“अरे, यहाँ तो सभी जागे हुए हैं,” मोहन दादा ने टार्च की रोशनी सबके चेहरों पर डाली।



सोने की कोशिश में लगभग एक घण्टा चारों को लेटे हुए बीत गया पर नींद किसी को भी न आई। सबको यही डर सता रहा था कि खुले हुए कमरे में भूत किसी समय भी आ सकते हैं। ऐसे डर के वातावरण में किसी को भी नींद कैसे आ सकती थी।

अन्त में जब लाख कोशिश करने पर भी खुले कमरे में नींद नहीं आई, तो नन्हे ने मौन तोड़ा, “दादा, कमरे के किवाड़ बन्द कर दो तो जल्दी नींद आ जायेगी।”

“नींद तो जल्दी आ जायेगी पर कमरे में भूत कैसे आयेंगे? भूत नहीं आयेंगे तो उनसे मित्रता कैसे होगी? मित्रता नहीं होगी तो हम भूतिया हवेली में वच्चों की दुनिया कैसे बसाएँगे। इसलिए किवाड़ खुले रहना बहुत जरूरी है, जनाब,” कहकर आशा ने हाथ मटका दिए।

“पर भूत किवाड़ खुलवा भी तो सकते हैं,” मुन्नी ने तुरन्त आशा की बात काट दी। उसे खुले हुए किवाड़ों से बहुत डर लग रहा था।

मोहन दादा भी किसी तरह किवाड़ बन्द करवाने की सोच रहा था। उसने कहा, “हाँ, जब भूत आयेंगे तो किवाड़ खटखटाकर खुलवा लेंगे। अब तो इन्हें बन्द ही कर देना चाहिए। नन्हे, तू किवाड़

बन्द कर दे।”

“मैं... मेरे हाथ किवाड़ों की चटकनी तक नहीं पहुँचते,” नन्हे ने यहाँ अपने छोटे होने का लाभ उठाया।

कमरे के इस किवाड़ में ऊपर की ओर चटकनी लगी हुई थी, जहाँ तक केवल मोहन दादा का ही हाथ पहुँच सकता था। इसलिए हारकर दादा को ही किवाड़ बन्द करने के लिए उठना पड़ा। उसने टार्च नन्हे के हाथ में पकड़ाकर कहा, “तू मुझे टार्च दिखलाता रह। देख, मैं ठोकर न खा जाऊँ!”

नन्हे ने आज्ञाकारी बालक की तरह टार्च जलाकर उसकी रोशनी दरवाजे की ओर तान दी।

दादा सावधानी से दरवाजे की ओर बढ़ा। वह डर के मारे काँप रहा था। उसके पैर उठाए नहीं उठ रहे थे लेकिन फिर भी वह बड़े साहस के साथ दरवाजे तक पहुँच गया। यहाँ पहुँचकर उसने किवाड़ बन्द करने के लिए किवाड़ को अपनी ओर खींचा। अभी वह पूरा किवाड़ बन्द भी न कर पाया था कि न जाने क्या देखकर वह जोर से चिल्लाया—“भूत!...भूत!...भूत!...भूत!” और उलटे पाँव दौड़कर नन्हे के ऊपर गिर पड़ा। नन्हे के हाथ से टार्च छिटककर दूर जा पड़ी। नन्हे ने दादा को अपने ऊपर से हटाने के बजाय उसे और जोर से कसकर पकड़ लिया। आशा सहमकर सोए



दादा चिल्लाया—

“भूत!...भूत!...भूत!...भूत!”

हुए बिरजू से चिपट गई और मुन्नी करवट बदलकर उलटी लेट गई। डरकर उसने अपने दोनों हाथों से अपने चेहरे को ढांप लिया था।

काफी देर तक चारों बच्चे इसी हालत में सहमे-से पड़े रहे, लेकिन भूत ने कोई नया कारनामा नहीं दिखाया।

टार्च फर्श पर खुली पड़ी थी और उसकी रोशनी अब भी दरवाजे की जड़ में पड़ रही थी। आशा ने थोड़ा-सा दरवाजे की ओर देखने की कोशिश की और हलके से बुदबुदाई, “दादा, भूत कहाँ है?”

“चौ...चौ...चौखट के ऊपर...चौखट के ऊपर!” मोहन दादा हकलाया।

आशा ने थोड़ा और मुड़कर चौखट की ओर देखा लेकिन उसे वहाँ पर कहीं भूत नजर नहीं आया। उसने फिर पूछा, “दादा, चौखट पर भूत कहाँ है?”

“क्या...नहीं है! मैंने तो देखा था,” कहकर मोहन दादा ने हाथ बढ़ाकर टार्च उठा ली और उसकी रोशनी चौखट पर ऊपर की ओर डाली। चौखट पर कुछ काला-काला लटका हुआ था।

दादा ने सहमकर पूछा, “यह क्या है?”

आशा ने उस ओर घूरकर देखा और फिर बिरजू को छोड़कर बैठती हुई बोली, “अरे, यह तो चमगादड़ लटका हुआ है, चमगादड़! दादा, यह भूत नहीं चमगादड़ है!”

सुनकर नन्हे उठकर बैठ गया। मुन्नी भी करवट बदलकर सीधी हो गई और बोली, “वाह दादा, चमगादड़ से डर गए!”

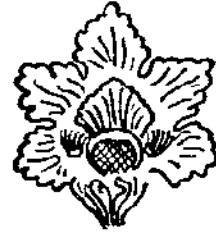
“डर...मैं डरा कहाँ था? मैं भला चमगादड़ से डर सकता हूँ!” मोहन दादा ताव में आकर बोला।

आशा बोली, “अच्छा पहले किवाड़ बन्द कर आओ। अपनी बहादुरी के गीत बाद में गाना!”

सुनकर दादा घबराया। चमगादड़ भी भूत से कम खतरनाक नहीं होता। उसने सुन रखा था कि एक बार यदि चमगादड़ किसी के चिपट जाता है, तो फिर उसे लाख कोशिश करने पर भी नहीं छोड़ता। चमगादड़ के रहते दरवाजे के पास जाना मौत के मुँह में जाने के बराबर था। पर वह अभी-अभी शेखी मारकर चुका था। और फिर आशा ने उसकी बहादुरी को चुनौती भी दी थी। अगर वह अब किवाड़ बन्द करने नहीं जाता तो उसकी सारी जान मिट्टी में मिल जाती।

एक बार फिर वह टार्च अपने हाथ में लेकर दरवाजे की ओर बढ़ा। सामने मौत का खतरा था लेकिन फिर भी उसे आगे बढ़ना पड़ रहा था। डर के कारण उसे पसीना छूटने लगा। लेकिन वह तब भी किसी प्रकार दरवाजे के पास तक पहुँच ही गया। दरवाजे के पास पहुँचकर उसने टार्च से किवाड़ों को खटखटाया। आवाज सुनकर चमगादड़ फुर्र से उड़ गया। मोहन दादा में जैसे जान लौट आई। उसने शान से अकड़कर किवाड़ बन्द किए और वापस लौट आया।

किवाड़ बन्द होते ही कमरे में भूत के आने का डर जाता रहा। अब नींद आने में कोई कठिनाई न थी। कुछ ही देर में चारों गहरी नींद में सो गए।



सुबह को जब नन्हे की आँखें खुलीं, उस समय तक उसका कोई भी साथी नहीं जागा था। कमरे में चारों ओर काफी प्रकाश फैल चुका था। यह प्रकाश कमरों में बने झरोखों से आ रहा था। नन्हे ने उठकर अपने चारों मित्रों को जगाया। चारों आँखें मलते उठ बैठे।

आशा ने बात छेड़ दी, “दादा, रात को हमें भूत क्यों नहीं दिखाई दिए? रात को तो भूत जरूर दिखाई देने चाहिए थे।”

“यही तो मैं भी सोच रहा हूँ। रात भूत दिखाई क्यों नहीं दिए?” मोहन दादा ने सिर खुजलाया।

“मुझे पता है भूत क्यों नहीं दिखाई दिए?” कहकर नन्हे भोला-सा मुँह बनाकर बंठ गया।

“तो बता न क्यों नहीं दिखाई दिए?” आशा ने पूछा।

“क्यों दादा बतलाऊँ?” नन्हे ने आशा के प्रश्न का उत्तर न देकर मोहन दादा से आज्ञा माँगी।

दादा कुछ सोच में पड़ गया।

बिरजू ने आँखें तरेकर नन्हे की ओर देखा और कहा, “बताना हो तो बता नहीं तो छुट्टी कर। जरा-सी बात के लिए दुनिया-भर से हँसकरवायेगा!”

नन्हे दादा के साथ-साथ बिरजू के गुस्से से भी घबराता था। उसने

तुरन्त बत दिया, “हमने कमरे के किवाड़ बन्द कर लिए थे ना। वस, इसीलिए भूत कमरे में नहीं आ सके।”



आशा ने बात छेड़ी—“दादा, रात को हमें भूत क्यों नहीं दिखाई दिए?”

मुन्नी को नन्हे की बात सवा सोलह आने जँच गई। वह बोली, “बिलकुल ठीक। बन्द कमरे में भूत आ ही कैसे सकते थे।”

“पर वे खटखटाकर किवाड़ तो खुलवा सकते थे,” आशा के दिमाग में नन्हे की बात नहीं जमी। रात सबका यही विचार था कि भूत अपने शाप ही किवाड़ खटखटाकर खुलवा लेंगे और फिर उनसे हमारी मित्रता हो जायेगी।

आशा की बात सुनकर मोहन दादा को एक बार सिर खुजलाना पड़ गया। लेकिन इस बार भाग्यवश उसकी खोपड़ी में उत्तर भी तुरन्त ही आ गया। वह बोला, “लेकिन भूतों को यह कहाँ पता होगा

कि हम इसी कमरे में सो रहे हैं, जो वे किवाड़ खटखटाते !”

दादा के उत्तर ने आशा की बात को जड़ से काट दिया था। उससे कोई उत्तर न देते बन पड़ा।

बिरजू ने जैसे सारी बातों का सार निकाल लिया, “तो फिर भूतों से मित्रता करने के लिए दोबारा रात होने तक इंतजार करो।”

दूसरा कोई उपाय ही नहीं था। चारों बच्चे माथे पर हाथ रखकर सोच में डूब गए। भूतिया हवेली में बच्चों की दुनिया बसाने के लिए भूतों से मित्रता करनी जरूरी थी और भूत केवल रात को ही मिल सकते थे। इसलिए अब भूतों से मित्रता करने के लिए रात होने का इंतजार करना था।

अंत में कोई अन्य उपाय न देखकर दादा ने कहा, “भूतों से मित्रता करने के लिए अब तो रात होने तक इंतजार करना ही पड़ेगा। इतनी देर तक यहाँ पर तो बैठा रहा नहीं जा सकता। आओ, कुछ देर भूतिया हवेली की ही सैर कर लें।”

“सैर करने तो चलो पर आज रात को कमरे के किवाड़ खोलकर सोना,” मुन्नी ने उठते-उठते असली बात की ओर इशारा किया। किवाड़ बन्द करके सोने के कारण ही वे रात को भूतों से नहीं मिल सके थे।

“हाँ-हाँ, हमें याद है,” मोहन दादा ने अकड़कर कहा और कमरे के किवाड़ों की चटखनी खोल दी। पाँचों नन्हे वीर सिपाही कमरे से बाहर निकल आए। इस बार भी सामान से भरा टाट का एक थैला बिरजू ने और एक दादा ने अपने कंधे पर लादा।

इस समय वे फिर उस बड़े कमरे में खड़े थे, जिसमें पत्थर का एक सिंहासन बना हुआ था। मोहन दादा ने चारों ओर देखकर अपने साथियों की राय पूछी, “अब कहाँ चलना है?”

“कहीं भी चलो। हमें तो इस भूतिया हवेली की सैर करनी है,” आशा ने तुरन्त उत्तर दिया।

“तो फिर इस छोटे-वाले दरवाजे से चला जाय। इस तरफ से तो हम आए ही थे। इस तरफ तो जाना अब बेकार है,” मोहन दादा ने सिंहासन के पीछे बने एक छोटे से दरवाजे की ओर इशारा किया।

यह दरवाजा एक लम्बी-सी सुरंग में को जाता था। यह सुरंग ऊपर से गोल थी। इसमें चारों ओर उजाला छाया हुआ था लेकिन यह नहीं दिखाई देता था कि रोशनी किस ओर से आ रही है। पाँचों बच्चे इस चमत्कार को देखकर आश्चर्य में पड़ गए।

नन्हे ने तुरन्त पूछा, “दादा, यह उजाला कहाँ से आ रहा है? यहाँ तो कोई खिड़की या रोशनदान भी नहीं दिखाई पड़ रहा।”

“नन्हे, यह भूतों की हवेली है, भूतों की! इसमें ऐसी ही अजीब-अजीब बातें होती हैं,” मोहन दादा ने उत्तर दिया।

सुरंग पार करके पाँचों एक गोल कमरे में पहुँच गए। इस कमरे में पैर रखते ही मोहन दादा का पैर एक इंच नीचे को घँस गया। दादा ने हड़बड़ाकर नीचे देखा। कमरे में एक बहुत मोटा गद्देदार गलीचा बिछा हुआ था। वह गलीचा इतना नरम था कि इस पर पड़ते ही दादा का पैर नीचे को घँस गया था।

उसे देखकर दादा के मुँह से आश्चर्य से निकल पड़ा, “अरे, यहाँ तो गद्दा बिछा हुआ है!”

“हमने बड़ी गलती की, दादा। रात को हमें यहीं सोना चाहिए था,” नन्हे ने अफसोस से हाथ मलकर कहा।

मुन्नी का ध्यान इस समय सब चीजों से हटकर गलीचे पर जमी धूल पर अटक चुका था। इस सुन्दर गलीचे पर धूल की एक मोटी तह जमी हुई थी। उसने आशा की ओर देखकर कहा, “आशा, फिर तू

कहेगी कि मैं बुढ़ियों-जैसी बातें बनाती हूँ। अब तू ही देख ले, इन भूतों को कहीं सफाई का सहर है।”

इतने सुन्दर गलीचे पर धूल देखकर आशा को भी कम बुरा नहीं लग रहा था। वह बोली, “वात तो तू सच कहती है। इन भूतों को सफाई करना सिखाना पड़ेगा।”

अभी बच्चा-पार्टी गलीचों पर अपनी राय प्रकट कर ही रही थी कि बिरजू की दृष्टि गलीचे के दूसरी ओर रखे दो गोल-गोल तकियों पर पड़ी।

“अरे, वह क्या है?” कहकर बिरजू ने टाट का थैला वहीं पटक कर और उछलकर तकियों के पास पहुँच गया।

इतने बड़े-बड़े गोल-गोल तकिए आज तक पाँचों में से किसी ने नहीं देखे थे। उन्होंने तो बस पतले-पतले चपटे तकिए देखे थे, जिन्हें वे रोज अपने सिर के नीचे लगाकर सोते थे। पाँचों में से किसी की समझ में नहीं आया कि यह गोल-गोल क्या है। भूतिया हवेली में उन्हें एक से एक आश्चर्यजनक चीजें देखने को मिल रही थीं।

आशा ने उस तकिए के हाथ लगाकर देखा, “अरे, यह तो मखमल का है।”

“मखमल का तो है, पर है क्या?” नन्हे ने पूछा। जो बात उसकी समझ में नहीं आती थी, वह तुरन्त पूछ लेता था।

“कहीं यह भूतों का पायदान तो नहीं है!” मुन्नी ने अनुमान लगाया।

“पगली! पायदान भी कहीं मखमल का होता है!” मोहन दादा न उसे प्यार से भिड़क दिया।

“भाई, मुझे तो यह भूतों का तकिया लगता है,” आशा ने भी अनुमान के घोड़े दौड़ाए।

“लो और सुनो! तकिया है!! तू ने कहीं गोल तकिया देखा है?” बिरजू ने आशा का मजाक उड़ाया।

आशा को इस प्रश्न के उत्तर में मौन रह जाना पड़ा। सचमुच उसने आज तक कहीं गोल तकिया नहीं देखा था।

अंत में मोहन दादा बोला, “मुझे तो यह कोई नई चीज मालूम देती है। रात को भूतों को मित्र बनाने के बाद उनसे इसके बारे में पूछेंगे। अब आगे चलो।”

बातें करते-करते मुन्नी थोड़ी-सी धूल साफ करके गलीचे पर बैठ गई थी। नरम-नरम गलीचे पर बैठना उसे बड़ा अच्छा लग रहा था। उसे बड़ा आराम मिल रहा था। फिर क्या था, गलीचे का थोड़ा-सा हिस्सा साफ कर लिया गया और उस पर पाँचों लेट लगाने लगे।

कुछ देर करवट बदलकर बिरजू बोला, “दादा, यहाँ कहीं पानी मिल सकता है? मुझे प्यास लग रही है।”

“और अपना पेट कुछ माँगता है,” यह आशा थी।

“पेट का इलाज तो हमारे पास है पर प्यास का इलाज दादा बतलायेंगे,” नन्हे ने लेटे से उठकर कहा।

“पेट का ही बतलाओ!” मुन्नी ने हाथ नचाए।

नन्हे ने कहा, “तो सुनो। दादा के पास जो टाट का थैला है उस में एक कटोरदान है...”

“कटोरदान में टिकिया-पपड़ी हैं। वे टिकिया-पपड़ी भूख का इलाज कर सकती हैं।” आशा ने नन्हे के मुँह का वाक्य छीन लिया।

इस समय सचमुच नन्हे ने अचूक दवा याद दिलाई थी। बच्चा-पार्टी के सदस्य तो लगभग यह भूल ही चुके थे कि वे घर से टिकिया-पपड़ी भी लेकर चले थे। सुबह से किसी ने कुछ भी न खाया था, इसलिए थोड़ी-थोड़ी भूख सभी को लग रही थी।



पाँचों ने खूब छककर पेट-पूजा की

मोहन दादा ने टाट के थैले में से कटोरदान निकाल लिया और उसे खोलकर सबके सामने रख दिया। फिर तो पाँचों ने खूब छककर पेट-पूजा की। यहाँ तक कि पाँचों ने सारी टिकिया-पपड़ी खतम कर डाली।

सूखा नमकीन खाने के बाद प्यास लगती है। टिकिया-पपड़ी खाने के बाद इन पाँचों को भी प्यास ने आ घेरा। बिरजू को तो पहले से ही प्यास सता रही थी। अब वह उसे और अधिक सताने लगी। वह बोला, “दादा, अब तो कहीं से पानी का इंतजाम करो; नहीं तो मेरा दम निकलता।”

नन्हे ने जीभ चटकारते हुए हाँ में हाँ मिलाई, “हाँ, अब तो कहीं से पानी मिलना चाहिए।”

“कहीं से क्यों! बाग में ही चलो। वही नारियल का पानी पीना।” दादा ने सुझाव रखा।

“हाँ, चलो, नारियल का पानी पीएँगे,” कहकर बिरजू उठ खड़ा हुआ।

उसके साथ उसके अन्य चारों साथी भी उठ खड़े हुए।



17



इस समय बच्चा-पार्टी के सभी सदस्यों को बड़ी जोर की प्यास लग रही थी। भूतिया हवेली में उन्हें कहीं भी पानी का नल नहीं दिखाई दिया था। इसलिए उन्हें दोबारा बाग में जाकर नारियल का मीठा-मीठा पानी पीने का निश्चय करना पड़ा। वे सब बाग में जाने के लिए वापस सुरंग से लौटकर पत्थर के सिंहासन वाले कमरे में आ गए। इस कमरे के अन्दर वे सब एक गैलरी से होकर आए थे। वापस लौटने के लिए वे सब फिर उसी गैलरी में घुस गए। गैलरी एक कमरे में जाकर समाप्त होती थी। पाँचों उस कमरे में पहुँच गए।

इस कमरे के सभी दरवाजे एक-से थे। यहाँ पर आकर मोहन दादा यह भूल गया कि वह इस कमरे में किस दरवाजे से आया था। वे सब दरवाजे एक-से ही कमरों में जाकर खुलते थे, इसलिए बराबर के कमरे को भी नहीं पहचाना जा सकता था। यह देखकर मोहन दादा का दिमाग चकरा गया। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह किस दरवाजे से बाग में वापस लौटें।

उसने अपने साथियों से कहा, “यहाँ तक तो रास्ता मुझे याद था। अब आगे का रास्ता तुम बतलाओ।”

“भई, वाह! यहाँ तक तो हमें भी याद था। बात तो आगे की है!” आशा ने हाथ मटकाए।

अन्दर आते हुए किसी ने नहीं सोचा था कि उन्हें वापस भी लौटना पड़ेगा इसलिए रास्ते की पहचान किसी ने नहीं की थी। फिर एक से कमरों और दरवाजों में पहचान होनी भी कठिन थी। सब गहरे सोच में डूब गए। दादा का हाथ अनजाने में ही उठकर उसकी ठोड़ी से जा चिपका।

धीरे-धीरे दादा ने सिर भी खुलाना शुरू कर दिया लेकिन उसके दिमाग में समस्या का हल फिर भी नहीं सूझा।

इस समय प्यास के कारण पाँचों का बुरा हाल हो रहा था। मुन्नी प्यास से परेशान होकर मन-ही-मन सोचने लगी कि इससे तो घर ही अच्छा था। वहाँ कम-से-कम प्यास तो न रहना पड़ता। उसने रोनी-सी सूरत बनाकर कहा, “बस, आज तो यहीं प्यास मरना पड़ेगा। अब तो घर जाने का भी रास्ता बन्द हो गया।”

“मरना क्यों पड़ता?” बिरजू ने थोड़ा साहस बँधाया, “एक-एक करके सब दरवाजों से चलकर देखते हैं। किसी न किसी में तो बाग का रास्ता मिल ही जायेगा।”

मरते क्या न करते! सब बिरजू की राय से सहमत हो गए और रास्ता खोजने के लिए एक दरवाजे में घुस गए। इस बार बिरजू आगे-आगे चला और मोहन दादा सबसे पीछे-पीछे।

जिस कमरे में बिरजू अब घुसा था, उसमें तीन दरवाजे थे। तीनों में से एक दरवाजे से होकर वह आगे बढ़ा। अब वे एक ऐसे कमरे में खड़े थे, जिसमें आठ दरवाजे थे। बिरजू ने इस कमरे के भी एक दरवाजे को पार किया और एक बहुत बड़े कमरे में पहुँच गया। यह कमरा लगभग उतना ही बड़ा था, जितना बड़ा सिंहासन वाला कमरा।

इस बड़े कमरे को देखकर दादा बोला, “जब हम अन्दर आए थे, तब इतना बड़ा कमरा कहाँ मिला था। यह तो हम गलत आ गए।”
“तो फिर लौट चलो, अब दूसरे दरवाजे से चलेंगे,” कहकर बिरजू पलट गया।

अभी वह लौटकर पहले ही कमरे में आया था कि वह घबराकर चारों ओर देखने लगा। इस कमरे के आठों दरवाजे एक से बने हुए थे और वह यह भूल गया था कि इस कमरे में वह किस दरवाजे से आया था। भूतिया हवेली उनके लिए एक अजीब भूल-भुलैया बन गई थी। जिस कमरे से एक बार वे निकल आए उसमें वे दोबारा वापस लौटकर जा ही नहीं पा रहे थे।

बिरजू की समझ में नहीं आ रहा था कि अब वह क्या करे। चोबेजी बनने गए थे छब्बेजी रह गए दूबेजी! उसने बड़ी निराशा से अपने साथियों की ओर देखा। उनमें से किसी को भी याद नहीं था कि वे इस कमरे में किस दरवाजे से घुसे थे।

इस समय टोली के सरदार मोहन दादा को अपने ऊपर बड़ा क्रोध आ रहा था कि वह क्यों इस भूतिया हवेली में आने को तैयार हो गया। प्यास के कारण उसके प्राण निकले जा रहे थे। जीभ बिलकुल सूख गई थी। वह मन-ही-मन सोचने लगा कि प्यासे मरने से तो अच्छा है कि बड़ों के अत्याचार ही सह लिए जाएँ!

तभी आशा बोली, “यह प्यास तो आज मेरे प्राण लेकर छोड़ेगी। इससे अच्छी तो बड़ों की दुनिया है।”

नन्हे तो कहते-कहते रो ही दिया, “मैं तो बेकार ही इस भूतिया हवेली में आया। घर पर मुझे बड़े भैया कभी-कभी प्यार से ही तो चपत मारते थे। उससे मुझे चोट तो नहीं लगती थी।”

दादा बोला, “इस भूतिया हवेली में तो बस मुसीबत-ही-मुसीबत

है। यहाँ पीने के लिए पानी नहीं मिलता, खाने के लिए खाना नहीं मिलता, सोने के लिए बिस्तरा नहीं मिलता। सुबह से अब तक न पाखाने जा सके हैं और न ही नहा सके हैं।”

इस समय छोट-छोटकर भूतिया हवेली में बुराइयाँ निकाली जा रही थीं। मुन्नी मला ऐसे मौके पर कैसे चुप रह सकती थी! वह बोली, “और तो और सुबह से मेरी गुड़िया ने न नहाया है न खाया है। रात-भर बेचारी जागती ही रही। घर पर कभी गुड़िया को सुलाना भूल जाती थी तो चाची याद दिला देती थीं। पर यहाँ तो कोई याद दिलाने वाला भी नहीं है।”

इधर बिरजू की हालत सबसे ज्यादा खराब हो रही थी। बच्चा-पार्टी के पाँचों सदस्यों में इस समय सबसे ज्यादा प्यास बिरजू की ही लग रही थी।

अन्त में बहुत परेशान होकर वह बोला, “यहाँ बैठे रहने से तो अच्छा है किसी नल की ही तालाश की जाए। शायद कहीं नल मिल ही जाए।”

“चाहे दुनिया-भर में कदम-कदम पर नल लग जाएँ पर इस भूतिया हवेली में नल नहीं मिल सकता,” मोहन दादा ने कुड़कर कहा।

“तो भूत पानी कहाँ से पीते होंगे! कम-से-कम एक नल तो भूतों के गुमलखाने में जरूर होगा,” नन्हे ने दादा की कही कल की बात दोहरा दी।

यद्यपि कमरों की इस भूल-भुलैया में नल मिलना सबको कठिन लग रहा था लेकिन एक बार फिर सब नल की खोज के लिए तैयार हो गए। एक के बाद एक कमरे की धूल फाँकी जाने लगी। लगभग भूतिया हवेली का चप्पा-चप्पा छान मारा गया लेकिन न तो द्वार

ही मिला और न नल की टोटी।

अन्त में पानी की तलाश करते-करते वे सब एक घास के मैदान में आ गए। यह मैदान चारों तरफ से कमरों से घिरा हुआ था और इसमें पीपल का एक बड़ा पेड़ खड़ा था। चारों ओर हरी-हरी घास लहरा रही थी। यहाँ पर आकर पाँचों मुस्ताने के लिए घास पर बैठ गए। उन्हें भूतिया हवेली में बेकार चक्कर लगाते हुए लगभग दो घण्टे हो गए थे। अब प्यास के साथ-साथ उन्हें भूख भी सताने लगी थी। दो घण्टे तक चलते रहने से थकान जो जड़ी सी अलग।

नन्हे ने जम्भाई लेकर पूछा, “प्यास के साथ-साथ तो भूख भी लगने लगी। यहाँ पर खाना कहाँ से आयेगा?”

“खाना तो आशा बना देगी, पर उसके लिए भी तो पानी चाहिए,” मोहन दादा के सव्दों में दुःख भरा था।

तभी मुन्नी ने कमर सीधी करने के लिए घास पर लेटकर एक अंगड़ाई ली। उसके अंगड़ाई लेते ही पानी की एक मोटी धार उस पर आकर पड़ने लगी। मुन्नी सकपकाकर एक ओर की भागी। उसकी समझ में नहीं आया कि अचानक यह क्या हो गया। यह अचम्भा देखकर टोली के अन्य चारों सदस्यों ने भी आश्चर्य से आँखें फाड़ दीं। जहाँ पर कुछ देर पहले मुन्नी लेटी थी, वहाँ से अब पानी की एक मोटी धार निकल रही थी।

धोड़ी देर तक भौंचक्के से एक दूसरे का मुँह तकने के बाद पाँचों उठकर पानी की उस धारा के पास आए। इस समय पाँचों की नुशी का ठिकाना नहीं था। जिसे वे घण्टों भूतिया हवेली में खोजते-खोजते थक गए थे, वह अचानक ही उन्हें मिल गया था।

दादा ने झुककर पानी की जड़ में देखा। वहाँ जमीन में एक मोटा छल्ला लगा हुआ था, जिसमें से होकर पानी निकल रहा था।

वह बोला, “मेरे विचार से तो यह कोई पाताल तोड़ कुआँ है। मुन्नी की कमर से इसका उकना खस गया है।”



पानी की मोटी धार देखते ही मुन्नी हड़बड़ाकर एक ओर भागी

“कष्ट भो हो! पाताल-तोड़ कुआँ हो या आकाश-तोड़! पहले तुम मुझे पानी पीने दो। बातें बाद में करना!” कहकर बिरजू ने चुल्लू बनाकर पानी की धार के आगे लगा दी और पेट भरकर पानी पिया।

उसके बाद उन चारों ने भी अपनी प्यास बुझाई। पानी बहुत ठण्डा और मीठा था। गरमी का मौसम था। सूरज तप रहा था। ऐसे मौसम में इतना ठण्डा पानी देखकर मोहन दादा का जी नहाने

के लिए मचल उठा। वह बोला, “भई, मैं तो अब नहाऊँगा। तुम नहाना चाहो नहाओ, न नहाना चाहो मत नहाओ।”

जाड़े का मौसम होता तो कोई नहाने से बचता भी। पर यह तो भरी गरमी का मौसम था। ऐसे मौसम में इतना ठण्डा और मीठा पानी देखकर कौन नहाने से पीछे हट सकता था! पाँचों ने नहाने के लिए कपड़े उतार दिए।

मुन्नी दौड़कर टाट के थैले में से अपनी गुड़िया का डिब्बा निकाल लाई और बोली, “देखो जी, सबसे पहले मेरी गुड़िया नहायेगी। तुम सब बाद में नहाना।”

दादा, बिरजू, नन्हे और आशा ने आज तक गुड़िया का नहाना नहीं देखा था। कपड़े की गुड़िया कैसे नहाती है, यह वे चारों देखना चाहते थे। वे तुरन्त राजी हो गए।

मुन्नी ने डिब्बा खोलकर अपनी गुड़िया को खड़ा किया। गुड़िया साडी-ब्लाउजों की कतरनों से बने बहुत सारे कपड़े पहने हुए थी। उसने धीरे-धीरे गुड़िया के शरीर पर से सारे कपड़े उतार लिए। केवल एक पेटिकोट की तरह से लपेटी कतरन उसे पहने रहने दी। इसके बाद एक चुल्लू पानी लेकर उसने गुड़िया पर छिड़क दिया और फिर दोबारा गुड़िया को सारे कपड़े पहना दिए।

चारों गुड़िया के इस नहाने को एकटक देख रहे थे। मुन्नी को गुड़िया वापस डिब्बे में रखते देख नन्हे बोला, “बस, नहा ली तेरी गुड़िया! यह भी कोई नहाना हुआ! मुश्किल से दो बूंद पानी साग ही गुड़िया पर पड़ा।”

मुन्नी ने मुँह बनाया, “और नहीं तो कैसे नहाती! गुड़िया तो ऐसे ही नाहती है।” इस बार उसने नन्हे की टेढ़ी-मेढ़ी टाँग वाले के लिए कुछ नहीं कहा।

बिरजू सापरवाही से बोली, “धरे, गुड़िया-गुड़ियों के किस्से तो ऐसे ही होते हैं। आओ, अब नहा लें।”

इसके बाद पाँचों नन्हे बहादुर इस ठण्डे-ठण्डे पानी में जी खोल कर नहाए।



नहाने-धोने के बाद बच्चा-पार्टी का ध्यान अपने-अपने पेटों की ओर गया। उनके पेटों में चूहे जैसी-जैसी छलांगें लगा रहे थे।

दादा बोला, “आशाजी, अब तुम्हारी बारी है। अब दिखाओ अपने करतब।”

आशा को खाना बनाना बहुत पसन्द था। वह तुरन्त तैयार हो गई, “लो, मैं अभी अंगीठी सिलगाती हूँ।”

“पर आशा, बनाओगी क्या-क्या?” नन्हे ने पूछा।

“गरमागरम परांठें और आलूदम का साग!” आशा ने इठलाते हुए उत्तर दिया। उसे परांठें और आलूदम का साग सबसे अच्छा बनाना आता था। परांठें तो वह खूब धी लगाकर करारे-करारे सेंकती थी।

मोहन दादा ने जीभ चटकाकर कहा, “हाँ, तेरे आलूदम की डींगें तो बहुत सुनी हैं। आज खाकर देखने से पता चलेगा।”

“डींग नहीं, सच कहती हूँ। खाने बैठोगे, तो हाथ चाटते रह जाओगे!” आशा ने गर्व से छाती फुलाकर कहा। वह मन-ही-मन सोच रही थी कि आज वह आलूदम बहुत चटपटे बनाएगी।

तभी मुन्नी ने हाथ नचाए, “भैया राने, हम तो हाथ नहीं चटनी चाटेंगे।”

“चटनी चाटना बाद में, पहले तो मेरे साथ काम करवा, “आशा ने मुन्नी पर हुकम चलाया।

दादा बोला, “हाँ भई, अकेले आशा ही काम करे यह ठीक नहीं है। थोड़ा-बहुत हाथ बिरजू और मुन्नी भी बटवायेंगे। आखिर खाना सभी तो खायेंगे।”

बिरजू और मुन्नी के पेटों में इस समय ‘चूहा दौड़ बिल्ली आई’ का खेल बहुत जोरों पर चल रहा था। वे तुरन्त राजी हो गए।

आशा ने मालकिन की तरह हुकम दिया, “बिरजू, तुम थैले में से अंगीठी और कोयले निकालकर लाओ और मुन्नी, तुम परात मुझे पकड़ा दो और आलू छीलो। अभी दो मिनट में खाना तैयार किए देती हूँ।”

नन्हे मोहन दादा के पास घास पर बैठा हुआ था। वह बोला, “हाँ, बस दो ही मिनट में तैयार कर दो। मेरे पेट में चूहों ने चूँ-चूँ करनी शुरू कर दी है।”

“बस देखते रहो!” कहकर आशा ने अंगीठी में कोयले डाल दिए और खुद भी दूसरे चाकू से मुन्नी के साथ आलू छिलवाने लगी। आलू छीलते-छीलते उसने एक बार फिर बिरजू की ओर देखकर कहा, “दादा वाले थैले में थोड़े से रद्दी कागज रखें होंगे। मैंने आग जलाने के लिए रख लिए थे। उन्हें ले आओ।”

बिरजू ने कागज लाकर अंगीठी के ऊपर रख दिए।

“यहाँ नहीं, यहाँ!” कहकर आशा ने अंगीठी पर से कागज उठाकर उन्हें मसोसा और अंगीठी के घर में डाल दिया, “अब आग सुलगा दो।”

“आग! आग किस से सुलगाऊँ?” बिरजू ने आश्चर्य से पूछा।

“माचिस के बक्स से, और किस से!” आशा ने जल्दी-जल्दी आलू



बिरजू ने कागज लाकर अंगीठी के ऊपर रख दिए

छीलते हुए उत्तर दिया।

“मेरे पास माचिस का बक्स कहाँ से आया?”

सुनते ही आशा ने हाथ का आलू पटक दिया और सिर पकड़कर बैठ गई।

“क्या हुआ?” दादा ने दूर से ही पूछा।

“होता क्या? माचिस का बक्स लाना तो भूल ही गए,” आशा ने बड़े अफसोस के साथ कहा।

सुनते ही चारों नन्हे वीर जैसे आसमान पर से गिर पड़े। चटपटे आलूदम और गरम-गरम परांठे खाने का स्वप्न-महल ढह गया। बिना माचिस के आग नहीं जल सकती थी और बिना आग के खाना नहीं बन सकता था।

नन्हे ने ठोड़ी पर हाथ रखकर कहा, “मैं तो पहले ही सोच रहा था कि खाने का कोई जरूरी सामान भूतिया हवेली में लाना जरूर भूल जाओगे।”

मोहन दादा ने कुछ ऊँचे स्वर में बिरजू से पूछा, “बिरजू, हवेली में पूरा सामान पहुँचाने की जिम्मेदारी तुम्हें सौंपी गई थी। यह माचिस का बक्स कैसे रह गया?”

“इसमें मेरी कोई गलती नहीं है, दादा। आशा ने खाने के सामान में इसे लिखवाया ही नहीं था,” बिरजू ने टका-सा जवाब दे दिया।

आशा बोली, “मेरे सिर दोप मत मड़, बिरजू। मैंने जितनी चीजें याद थीं, सभी लिखवा दी थीं। माचिस के बक्स-जैसी छोटी चीज में भी कुछ लिखवाने की बात थी।”

“अब इस छोटी-सी चीज ने ही तो सब गड़बड़ कर दिया,” मुन्नी ने भी हाथ का न कू जमीन पर दे मारा।

दो ही मिनट पहले सब यह सोच-सोचकर खुश हो रहे थे कि अभी ताजा-ताजा गरम-गरम खाना खाने को मिलेगा। लेकिन अब पाँचों को पेट भरने का भी कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा था।

नन्हे ने मुँह लटकाकर पूछा, “दादा, अब क्या किया जाए? अब तो खाना भी नहीं बन सकता।”

“किया जाए मेरा सिर!” दादा ने झुंझलाकर उत्तर दिया।

आशा मुँह बनाकर बिरजू को चिढ़ाती हुई बोली, “इस बिरजू ने ही हम सबको फँसाया है। इसी ने कहा था कि भूतिया हवेली में बच्चों की दुनिया बसायेंगे। बस गई बच्चों की दुनिया?”

बिरजू ने कुढ़कर उत्तर दिया, “जब भूतों से मित्रता हो जायेगी, तब कहियो। जब वे अच्छी-अच्छी चीजें खाने को देंगे, तब तो बड़ी सपासप खायेगी!”

“पर भूत कहीं मिलें भी,” नन्हे ने भी अपनी टांग अड़ाई।

“मुझे तो लगता है इस हवेली में भूत हैं ही नहीं,” मोहन दादा ने कुछ सोचकर कहा।

“क्या!... भूत नहीं हैं!” चारों एक साथ चौंक पड़े।

“हाँ, अगर होते तो हमें दिखाई न देते,” मोहन दादा ने अपनी बात पर और अधिक जोर दिया।

“नहीं... यह कैसे हो सकता है! लोगों ने इसका नाम ‘भूतिया हवेली’ यों ही रख दिया?” बिरजू को दादा की यह बात सच नहीं मालूम दी।

“और फिर कल शाम तुम्हें भूत दिखाई भी तो दिया था!” आशा ने मोहन दादा को याद दिलाया।

दादा बड़े चबकर में पड़ा। कल शाम उसने आशा को तंग करने के लिए भूत बोला था। वास्तव में उसे कोई भूत नहीं दिखाई दिया

था। पर उसके साथी सोच रहे थे कि क्योंकि दादा को भूत दिखाई दिया था इसलिए इस हवेली में भूत जरूर हैं। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह अपने साथियों को किस प्रकार समझाए कि इस हवेली में भूत नहीं हैं। अंत में उसने सबको सच-सच बतलाने का निश्चय किया।

उसने कहना शुरू किया, “देखो, कल मैंने...!” कहते-कहते उसकी जीभ रुक गई। अपना भूत बतलाते हुए उसे बड़ी शर्म लग रही थी।

नन्हे ने पूछा, “कल मैंने... क्या दादा?”

“कल मैंने तुमसे एक भूत बोला था!” दादा ने साहस जमा करके एकदम कहा।

“कौन-सा भूत?” आशा ने उत्सुकता से पूछा।

“कहते हुए मुझे शर्म आ रही है,” कहकर दादा ने गरदन नीचे झुका ली।

“नहीं-नहीं, शरमाने की कोई बात नहीं है,” मुन्नी ने कहा।

“कल मुझे कोई भूत नहीं दिखाई दिया था।” मोहन दादा ने हलके से कहा।

“तो कल मैं बेकार ही भागी थी!” आशा ने आश्चर्य से आँखें चौड़ाई।

“और दादा, तुम जो कह रहे थे... बड़ा-बड़ा मुँह, हाथों की सूंड-जैसी नाक...” नन्हे ने दादा की नकल करते हुए पूछा।

“वह भी भूत था,” मोहन दादा ने मरे हुए स्वर में उत्तर दिया।

यह सब सुनकर बच्चा-पार्टी के चारों सदस्य अवाक रह गए। उनकी टोली का सरदार उनसे ही इतना बड़ा भूत बोलेंगा, यह किसी को भी आशा न थी। दादा के भूत से आशा को सबसे अधिक

परेशानी उठानी पड़ी थी। उसको बड़ा गुस्सा आया; पर क्योंकि दादा ने खुद अपनी गलती मान ली थी, इसलिए वह चुप रही।

मुन्नी बोली, “इसका तो साफ मतलब हुआ कि इस हवेली में सचमुच भूत नहीं हैं !”

“भूत क्यों नहीं होते ? भूत हैं ! नहीं तो सबसे पहले वाले कमरे के किवाड़ कैसे बन्द हो गए थे ?” बिरजू, जो अब तक चुपचाप खड़ा था, एकदम बोल उठा।

सुनकर मोहन दादा चौंक पड़ा। उसे पूरी तरह से विश्वास हो चला था कि इस हवेली में भूत नहीं हैं। लेकिन बिरजू के एक ही वाक ने उसके विश्वास को चारों खाने चित्त कर दिया था। अब वह सोचने लगा कि यदि हवेली में भूत नहीं हैं, तो किवाड़ अपने-आप बन्द कैसे हो गए थे और फिर लाख कोशिशें करने पर भी खुले क्यों नहीं थे।

इधर नन्हे से अब भूख सहन नहीं हो पा रही थी। वह बोला, “हवेली में भूत हैं या नहीं हैं, यह बाद में सोचना। पहले कुछ खाने का इंतजाम करो नहीं, तो मेरा दम निकला।”

उसके वाद दिलाते ही सबके पेट के चूहे चौंककर जाग गए। आशा बोली, “यहाँ खड़े-खड़े सोचते रहने से तो पेट भर नहीं जायेगा। इससे तो बाग को ही ढूँढ़ने की कोशिश करो। शायद इस बार मिल जाय।”

आशा के कहने के अनुसार एक बार फिर पाँचों बाग खोजने चलने के लिए तैयार हो गए। सारा सामान फिर समेटकर आट के झेलों में भर लिया गया।

एक के बाद एक कमरे को पार करते हुए वे प्रांगे बढ़ने लगे। चलते-चलते वे बहुत दूर तक निकल गए लेकिन उन्हें कहीं भी बाग

नहीं दिखाई दिया। इस समय भूख के कारण पाँचों के प्रांगे गले में अटक रहे थे।

दरवाजों को पार करते-करते अंत में अचानक वे सब एक बरामदे में पहुँच गए। यहाँ आते ही बिरजू खुशी से चिल्ला उठा, “अरे ! यह तो सामने चारदीवारी आ गई !”

सुनते ही चारों ने जल्दी से सामने की ओर देखा। सचमुच



बिरजू खुशी से चिल्ला उठा—“अरे ! यह तो चारदीवारी आ गई !” सामने भूतिया हवेली की वही चारदीवारी खड़ी थी, जिस पर चढ़कर वे हवेली में घुसे थे।

मुन्नी ने चारों ओर निगाह दौड़ाकर आश्चर्य से कहा, “अरे ! यह तो हम फिर वहीं आ गए, जहाँ से चले थे। इसी बरामदे से तो

हम सबसे पहले दरवाजे में घुसे थे।”

चारदीवारी को देखकर बच्चा-पार्टी के पाँचों सदस्य खुशी से उछल रहे थे। उन्हें ऐसा लग रहा था मानो वे भूतों की कैद से छूट कर बाहर निकले हों। इस समय उनके पीछे कमरों की एक लम्बी पंक्ति खड़ी थी और सामने भूतिया हवेली की चारदीवारी, जिसे पार करके वे बड़ी आसानी से अपने घर वापस लौट सकते थे।

मोहन दादा ने अपने साथियों से पूछा, “वह कौन-सा दरवाजा था, जिससे हम अन्दर घुसे थे ? जरा देखूँ तो, भूतों ने उसे कैसे बन्द किया था।”

“देख तो लो, पर अन्दर मत घुसना !” नन्हे ने चेतावनी दी। अब वह किसी भी शर्त पर भूतिया हवेली के कमरों में घुसने के लिए तैयार नहीं था।

“घुस कौन रहा है !” कहकर मोहन दादा ने एक-एक करके सभी दरवाजों के किवाड़ देखने शुरू कर दिए। आशा ने भी दूसरी तरफ से यही काम शुरू कर दिया। अन्दर आते हुए उसने इस किवाड़ को बहुत देर तक घूर-घूरकर देखा था, इसलिए इसकी उसे विशेष पहचान थी।

एक किवाड़ के पास ठिठककर वह चिल्लाई, “मोहन दादा, यह रहा ! हम इस दरवाजे से अन्दर गए थे।”

चारों बच्चे दौड़कर आशा के पास आ गए। किवाड़ की साँकल खुली हुई थी। मोहन दादा इसे देखकर बोला, “अरे ! इस किवाड़ की तो साँकल खुली हुई है। हमसे यह खुला क्यों नहीं था ?”

“इसे अब खोलकर देखो,” कहकर बिरजू आगे बढ़ा।

मुन्नी ने टोका, “नहीं-नहीं, इसे मत खोलो। इसे भूतों ने बन्द कर रखा है।”

दादा ने साहस बँधाया, “तू खोल भी, बिरजू। दिन में भूत नहीं आते।”

बिरजू ने किवाड़ों पर धक्का मारा लेकिन किवाड़ नहीं खुले। बिरजू ने दादा की ओर देखा।

मुन्नी हाथ मटकाकर बोली, “मैं तो पहले ही कह रही थी यह किवाड़ नहीं खुलेंगे। ये भूतों की माया से बन्द हैं।”

तभी आशा न जाने क्या देखकर चौंक पड़ी। नन्हे ने पूछा, “क्या हुआ है, आशा ?”

“इस हवेली में कोई भूत-प्रेत नहीं है। दरवाजा तो इस चटकनी के कारण बन्द हुआ था।” कहकर आशा ने किवाड़ों में नीचे की तरफ लगी चटकनी की ओर इशारा किया। चटकनी फर्श में बने एक छेद में अटकी हुई थी।

इस चटकनी को देखते ही पाँचों बच्चों की समझ में सारी बात आ गई। जब वे कमरे के अन्दर जा रहे थे, तब यह चटकनी खुली हुई थी। उस समय उसकी फर्श पर रगड़ खाने की आवाज सुनकर वे चौंक भी पड़े थे। इसके बाद जब वे सब अन्दर कमरे में पहुँचे तो आँधी के तेज भोंकों से किवाड़ बन्द हो गए थे और चटकनी फर्श बने छेद में जा गिरी थी। यही कारण था कि तब बहुत कोशिशें करने पर भी यह किवाड़ नहीं खुले थे। उस समय सबने इसे भूतों की कारस्तानी समझा था, पर वास्तव में यह सब चटकनी की कारस्तानी थी।

यह सब देख-समझकर मोहन दादा ने पूछा, “क्यों बिरजू, हवेली में अब तो कोई भूत बाकी नहीं है ?”

बिरजू ने झेंपकर सिर झुका लिया। उससे कोई उत्तर न दिया गया। पर नन्हे ऐसे मौके पर चुप नहीं रह सकता था। उसने कहा, “अजी, अब कहाँ ! अब तो सब भूत चटकनी बन गए !”



बच्चा-पार्टी के पाँचों बहादुरों ने मिलकर अब भूतिया हवेली का रहस्य जान लिया था। उन्हें अब पता चल गया था कि वास्तव में भूतिया हवेली में कोई भूत नहीं रहता था। लोगों ने गलती से ही इसका नाम 'भूतिया हवेली' रखा हुआ था।

इस रहस्य को जान लेने के बाद मुन्नी का ध्यान फिर अपने पेट पर पहुँच गया। वहाँ अब भी चूहों ने शोरगुल मचा रखा था। वह कुछ नाराज-सी होकर बोली, "दादा, मैं तो घर पर ज़िन्दा पहुँच नहीं सकती। मेरे तो यही भूख से प्राण निकल जायेंगे।"

"ऐसी बुरी बात नहीं कहते। बस, अब घर को ही तो चल रहे हैं।" मोहन दादा ने अपने ताऊ की नकल उतारी।

"तो फिर चारदीवारी पर चढ़ो ना!" कहकर आशा ने अपने पेट पर हाथ फेरा।

"चारदीवारी पर...! चोर की तरह!! अब हमें किसी का डर नहीं है? अब तो हम शान से हवेली के फाटक से बाहर निकलेंगे," बिरजू ने रीब के साथ कहा।

"हाँ, यह चोरों की तरह दीवार लाँघकर जाना हमारी शान के खिलाफ है। हमारे लिए भूतिया हवेली का सबसे बड़ा फाटक खुलेगा।

बच्चा-पार्टी का सरदार भी अकड़ा और चारदीवारी के बराबर-बराबर चलता हुआ भूतिया-हवेली के फाटक पर पहुँच गया। उसके पीछे-पीछे बच्चा-पार्टी के चारों सदस्य भी फाटक के सामने आ खड़े हुए।

दादा ने एक नजर फाटक की साँकल को देखा, फिर बिरजू को देखा और तनकर हुक्म दिया, "बिरजू, तुम हमारी टोली के सबसे बहादुर सिपाही हो। इस फाटक को आज तुम खोलो।"

बिरजू अपनी बड़ाई सुनकर फूलकर कुप्पा हो गया। वह तुरन्त साँकल खोलने के लिए आगे बढ़ा। इस समय भूतों का कोई डर नहीं था इसलिए उसे फाटक के पास जाने में जरा-सी भी हिचकिचाहट नहीं हुई। लेकिन जब उसने फाटक के पास पहुँचकर ऊपर की हाथ उठाए, तो देखा कि उसका हाथ विशाल फाटक की साँकल से काफी दूर रह गया था।

मोहन दादा थोड़ी दूर खड़ा यह सब देख रहा था। उसने उसी प्रकार अकड़कर दूसरा हुक्म दिया, "बिरजू, तुम मुर्गा बन जाओ। आशा, तुम इसके ऊपर मुर्गा बनना और उसके ऊपर मुन्नी मुर्गा बनेगी। फिर सबके ऊपर चढ़कर नन्हें साँकल खोलेगा।"

"और दादा, तुम क्या करोगे?" नन्हें ने पूछा।

"मैं...!" अब दादा के सपकाने की बारी थी। उसने धबरा कर इधर-उधर देखा। लेकिन जल्द ही उसे रास्ता मिल गया। वह बोला, "मैं तुम सबको देखता रहूँगा। कहीं कोई गिर न पड़े।"

यह सुनकर तीनों मुर्गे फाटक से लगकर खड़े हो गए। नन्हें उन तीनों मुर्गों पर चढ़ गया। वहाँ से फाटक की साँकल अधिक दूर नहीं थी। उसने थोड़ा जोर लगाकर साँकल खोल दी और नीचे उतर आया। इसके बाद तीनों मुर्गे फिर से बच्चे बन गए।

साँकल खुल जाने के बाद फाटक खोलना कोई कठिन काम न था। पाँचों ने जोर लगाकर विशाल फाटक के दोनों किवाड़ खोल दिए और बाहर निकल आए।



तीन मुर्गे फाटक से लगकर खड़े हो गए। नन्हें उन तीनों मुर्गों पर चढ़ गया।

अब पाँचों मन-ही-मन कोई बहाना सोच रहे थे, जिससे घर पर भार न पड़े। पर कोई बहाना मिल ही नहीं रहा था। घण्टे-दो घण्टे गुम रहने का बहाना तो आसानी से बनाया जा सकता था लेकिन एक रात एक दिन गुम रहने का बहाना बनाना आसान काम नहीं था।

नन्हें ने पूछा, "दादा, घर पर जाकर क्या करें?"

"यही तो मैं भी सोच रहा हूँ, नन्हें," कहकर मोहन दादा ने

अपना सिर खुजलाया।

"अगर घर पर सच-सच बात कह देंगे, तो शायद माफ़ी मिल जाए," आशा ने सुझाव रखा। उसकी माता जी सच बोलने पर उसे हमेशा माफ़ कर देती थीं।

"हाँ, मेरे चाचा भूठ बोलने पर बहुत मारते हैं," मुन्नी को आशा की बात पसन्द आई।

सच-सच कहने के अलावा और कोई रास्ता भी न था। सबने सब-कुछ सच-सच बता देने का निश्चय किया और घर की ओर बढ़ चले।

चलते-चलते जब उनका मोहल्ला पास आ गया, तो मोहन दादा हककर बोला, "बिरजू, तू आगे-आगे चल। मैं सबके पीछे-पीछे चलूँगा।"

"ना दादा, आगे तो टोली के सरदार को ही चलना चाहिए!" बिरजू ने सहमकर कहा।

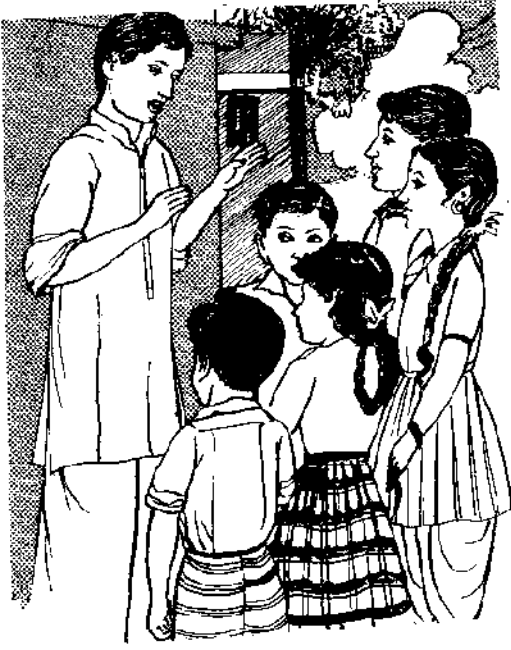
"अच्छा तो मुन्नी, तू आगे-आगे चल। तेरा मकान सबसे पहले आता है," मोहन दादा ने मुन्नी से कहा।

लेकिन आगे-आगे चलने के लिए वह भी तैयार न थी। वह बोली, "ना भैयाराने, मैं सरदार की शान के खिलाफ कुछ भी नहीं कर सकती।"

अभी वे यह निश्चय भी न कर पाये थे कि आगे-आगे कौन चले कि उन्हें मोहल्ले में से एक जान-पहचान का आदमी आता हुआ दिखाई दिया। उस आदमी ने पाँचों को दूर से ही पहचान लिया और दौड़कर उनके पास आया।

"अरे! तुम सब यहाँ हो! तुम्हारे घरवाले तो तुम्हें शहर-भर में ढूँढ़ फिरे। तुम्हारा पता देने वाले को सौ रुपए का इनाम देने की

भी मुनादी करा रखी है। आओ, मेरे साथ घर चलो।” कहता हुआ वह पाँचों को उनके घर ले गया।



“अरे, तुम सब यहाँ हो! तुम्हारे घर वाले तो तुम्हें शहर-भर में ढूँढ़ फिरे!”

नन्हे को देखते ही उसकी माँ उससे लिपट गई। मुन्नी को उसकी चाची ने गोद में खींच लिया। बिरजू को उसके पिताजी ने बाँहों में उठा लिया। आशा को उसकी माता जी ने गोद में छुपा लिया और मोहन को उसके बड़े भैया ने सीने से चिपका लिया। जब से पाँचों बच्चे भूतिया हवेली में गए थे, तब से उनके घरवाले बहुत परेशान थे।

सबने मिलकर शहर का चप्पा-चप्पा छान मारा था। सारे शहर में बच्चों का पता बतलाने वाले को सौ रुपए देने की मुनादी भी करवा दी थी। नन्हे के बड़े भैया ने तो कल से एक मिनट को भी खड़े होकर दम नहीं लिया था और आशा की माता जी ने तो कल से खाना ही नहीं खाया था। कल से सबके चेहरे पर मुर्दनी छाई हुई थी लेकिन अब पाँचों बच्चों को ठीक देखकर सबके चेहरे प्रसन्नता से खिल उठे।

पाँचों बच्चों को इस समय बड़ी भूख लग रही थी। सबसे पहले पाँचों को गरम-गरम खाना खिलाया गया। इसके बाद पाँचों के घर-वालों ने पाँचों से बड़े प्यार से एक दिन एक रात घर से गायब रहने का कारण पूछा। पाँचों ने सारी घटना शुरू से आखिर तक सच-सच बताया दी। सुनकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। उनको पूरा विश्वास था कि भूतिया हवेली में भूत रहते हैं। इसलिए वे रात को उसके पास जाने से घबराते थे। लेकिन पाँचों नन्हे-मुन्ने उनको बतला रहे थे कि वे भूतिया हवेली के अन्दर पूरी रात बिताकर आये हैं और वहाँ कोई भूत नहीं रहता। अन्त में सबने बच्चों के कहने के अनुसार उस हवेली के अन्दर जाकर देखा। सचमुच वहाँ पर कोई भूत नहीं था।

